मूल्य १०.०० रूपया

तित्थयर

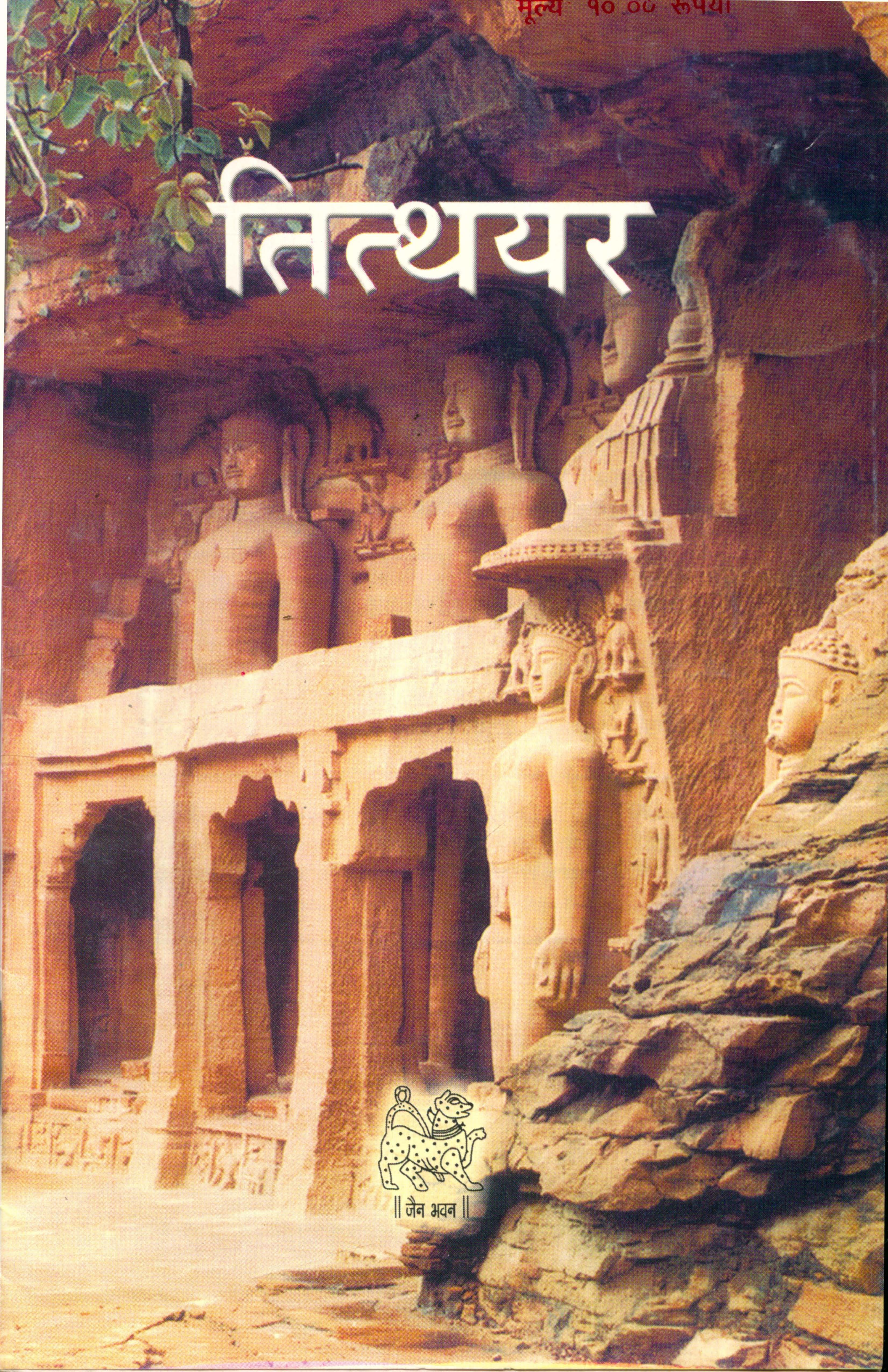

|| जैन भवन ||

ज्ञान से पदार्थों को जाना जाता है,
दर्शन से श्रद्धा होती है,
चारित्र से कमास्रव की रोक होती है,
और तप से शुद्धि होती है।

Sethia Oil Industries Ltd.

Manufacturers of De-oiled Rice Bran, Mustard Deoiled Cakes, Neem deoiled Powder, Groundnut De-oiled Cakes, Mahua deoiled cakes etc. And Solvent Extracted Rice Bran Oil, Neem Oil, Mustard Oil etc.

Plant:
Post Box No.5
Lucknow Road
Sitapur-2261001 (U.P.)
Ph : 242017/42397/
42073 (05862)
Gram - Sethia- Sitapur
Fax : 242790 (05862)

Registered Office:
143, Cotton Street
Kolkata - 700 007
Ph : 2238-4329/
8471/5738
Gram - Sethia Meal

Executive Office:
2, India Exchange Place
Kolkata - 700 001
Ph : 22201001/9146/5055
Telex : 217149 SOIN IN
FAX : 22200248 (033)

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३० अंक - ०४, जुलाई २००६

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिये
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : 2268-2655, Website : www.info@jainbhawan.com

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें —
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Subscription for one year : Rs. 100.00, US$ 20.00,
for three years : Rs. 300.00, US$ 60.00,
Life Membership : India : Rs. 1000.00, Foreign : US$ 160.00

Published by Smt. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and Printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 007 Phone : 2241-1006

संपादन
डॉ. लता बोथरा,

॥ जैन भवन ॥

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	ध्यानशतक : एक परिचय	डॉ. सागरमल जैन	१६१
२.	योगशतक	डॉ. इन्दुकला हीराचन्द झवेरी	१७५
३.	सिंहल की राजकन्या (**सुदर्शना**)	आचार्यश्री विजयविशालसेनसूरिजी म. सा.	१८२

मूल्य - १०.०० रूपये

कवरपृष्ठ : गोपाचल पर्वत (ग्वालियर) में स्थित प्राचीन तीर्थंकर मूर्तियाँ

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

ध्यानशतक : एक परिचय

डॉ. सागरमल जैन

साधना और ध्यान :

जैन साधना वस्तुतः समत्वयोग की साधना है। समत्व की यह साधना ध्यान और कायोत्सर्ग के बिना संभव नहीं है। सामान्यतया व्यक्ति का ध्यान तो कहीं न कहीं केन्द्रित रहता है किन्तु जो ध्यान पर केन्द्रित होता है अथवा जिसका विषय बाह्य जगत से सम्बन्धित तथ्य होता है, चाहे फिर वे व्यक्ति हो या वस्तुएं हो वह ध्यान वस्तुतः ध्यान नहीं है, क्योंकि वह हमारी चेतना को उद्वेलित करता है। उसमें अनुकूल के प्रति राग और प्रतिकूल के प्रति द्वेष का जन्म होता है। राग और द्वेष की वृत्तियाँ पुनः आवेगों को या कषायों को जन्म देती है। कषायों की उपस्थिति से चेतना का समत्वभंग हो जाता है और चित्त उद्वेलित बना रहता है। यही कारण है कि जैन आचार्यों ने आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान को ध्यान के रूप में वर्गीकृत करते हुए भी साधना की दृष्टि से उन्हें त्याज्य ही माना।

यद्यपि जैन आगम साहित्य में और परवर्ती ग्रन्थों में इन दोनों ध्यानों के स्वरूप, लक्षण, विषय, आलंबन, स्वामी (कर्त्ता) आदि की विस्तृत चर्चा हुई है किन्तु उसका कारण यह है कि इन अशुभ ध्यानों के स्वरूप समझकर ही इनका निराकरण किया जा सकता है। अतः जैन परम्परा के ग्रन्थों में ध्यान की जो चर्चा हुई है उसमें शुभ और अशुभ दोनों ही प्रकार के ध्यानों की चर्चा मिलती है। आर्त्त और रौद्र ध्यान अशुभ ध्यान हैं। उनमें प्राणी की स्वाभाविक रूप से प्रवृत्ति पाई जाती है, जबकि धर्मध्यान शुभध्यान है वह साधना का प्रथम चरण है। ध्यान साधना के क्षेत्र में अन्तिम ध्यान तो शुक्ल ध्यान ही माना गया है। यह शुभ और अशुभ से परे शुद्ध स्वरूप का ध्यान है। आर्त्त और रौद्रध्यान के विषय बाह्य होते हैं। जबकि धर्मध्यान और शुक्लध्यान और शुक्लध्यान के विषय परवस्तु न होकर स्व-स्वरूप ही होता है। यद्यपि धर्मध्यान के परहित और करुणा से युक्त होने के कारण किसी दृष्टि से उसे पर से सम्बन्धित

माना जा सकता है। किन्तु मूलतः वह आत्मनिष्ट ही होता है। शुक्लध्यानशुद्धध्यान है उसका सम्बन्ध मात्र स्वरूपानुभूति से है। इसमें आत्मा सविकल्पदशा से निर्विकल्प दशा में स्थित होती है। यह परम समाधि रूप है और मुक्ति का अनन्तर कारण है। यही कारण है कि जैन आचार्यों ने ध्यान के सम्बन्ध में पर्याप्त चिन्तन किया है और उस पर स्वतन्त्र ग्रन्थ भी लिखे हैं। ध्यान के सम्बन्ध में लिखे गये ग्रन्थों में झाणाज्झयण अपरनाम ध्यानशतक प्राचीनतम है। ग्रन्थ का नाम- झाणाज्झयण या ध्यान शतक।

प्रस्तुत ग्रन्थ के नाम को लेकर दो अभिमत्त प्राचीनकाल से देखने में आते है। ग्रन्थकार ने स्वयं इसे ध्यानाध्ययन (झाणाज्झयण) कहा है। जबकि इसके प्रथम टीकाकार आचार्य हरिभद्रसूरि ने आवश्यक निर्युक्ति की टीका में इस ग्रन्थ को ध्यानशतक कहा है। वैसे ये दोनों नाम सार्थक ही प्रतीत होते हैं। प्रथम तो लेखक ने ग्रन्थ की प्रथम मंगल गाथा में 'झाणाज्झयण पवक्खामि' कहकर ग्रन्थ को जो ध्यानाध्ययन नाम दिया है वह इस लिये दिया है कि उन्होंने अपने विशेषावश्यक भाष्य में आवश्यक सूत्र पर भाष्य लिखने की प्रतिज्ञा की थी। नंदीसूत्र में आवश्यक सूत्र के छः अध्ययनों को छः शेष स्वतंत्र ग्रन्थों के नाम से ही उल्लेखित किया गया है। उसमें पाँचवा आवश्यक जो कायोत्सर्ग रूप कायोत्सर्ग है। कायोत्सर्ग मूलतः ध्यान की ही एक अवस्था है अतः उस अध्ययन पर भाष्य की दृष्टि से लिखी गयी गाथाओं को ध्यानाध्ययन कहा गया है। विशेषावश्यक भाष्य यद्यपि आवश्यकसूत्र के छहों अध्ययनों पर लिखा जाना था, किन्तु प्रस्तुत विशेषावश्यक भाष्य सामायिक अध्ययन पर ही सीमित होकर रह गया शेष अध्ययनों पर नहीं लिखा जा सकता। अतः एक संभावना यह भी है कि आचार्य जिनभद्रगणि की रुचि ध्यान में रही हो। इसलिए उन्होंने सामायिक के अध्ययन के बाद ध्यानाध्ययन पर भाष्य गाथाएँ लिखने का प्रयत्न किया हो और उन्हीं गाथाओं ने ही आगे चलकर एक स्वतंत्र ग्रन्थ का रूप ले लिया हो। इसलिये लेखक के द्वारा सूचित ध्यानाध्ययन नाम प्रामाणिक लगता है।

आवश्यक निर्युक्ति की टीका में आचार्य हरिभद्र द्वारा इसे जो ध्यानशतक नाम दिया गया है वह इसकी गाथा संख्या १०५ होने के कारण दिया है। अतः इस ग्रन्थ का ग्रन्थकार के द्वारा दिया गया नाम ध्यानाध्ययन है और

टीकाकार हरिभद्रसूरि के द्वारा दिया गया नाम ध्यान शतक है। हरिभद्र के काल में ग्रन्थों की श्लोक या गाथाओं की संख्याओं के आधार पर नामकरण करने की प्रवृत्ति रही है। स्वयं हरिभद्रसूरि ने ही संख्याओं के आधार पर अपने ग्रन्थों का नामकरण किया है।

आचार्य हरिभद्रने प्रतिक्रमण अध्ययन की निर्युक्ति की टीका में 'चहुविहं झाणं' सूत्र पर टीका लिखते हुए ये गाथाएं उद्धृत की है। हम देखते हैं आवश्यक निर्युक्ति की वृत्ति में आचार्य हरिभद्र ने इन गाथाओं को उसी सूत्र की वृत्ति में उद्धृत किया है, इससे ऐसा अवश्य लगता है कि ये गाथाएँ भाष्य रूप है। यहाँ प्रारम्भ में ध्यान शतक नाम देकर बाद में झाणज्झयणं की वृतिं भी लिखी है। अतः ध्यान शतक यह नामकरण हरिभद्र का ही है। क्योंकि उन्होंने अपने अनेक ग्रन्थों का नामकरण गाथा या श्लोक संख्या के आधार पर किया है, यथा-अष्टक, षोड़शक, विंशिका द्वात्रिंशिका पंचाशक आदि। इसी प्रकार अपने योम सम्बन्धी एक ग्रन्थ का नाम भी उन्होंने योग शतक दिया है अतः प्रस्तुत ग्रन्थ का ध्यानशतक नाम ग्रन्थाकार के द्वारा न दिया जाकर ग्रन्थ के टीकाकार हरिभद्र के द्वारा ही दिया गया है, ग्रन्थकार द्वरा दिया गया नाम तो 'झाणज्झयण' ही है, अतः दो नामों के होने पर भी ग्रन्थ और ग्रन्थकार के विषय में किसी प्रकार की भ्रान्ति की कल्पना नहीं करनी चाहिए।

ग्रन्थ के कर्ता :- जहाँ तक प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्ता का प्रश्न है परम्परागत दृष्टि से उसके कर्ता जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण माने जाते है। इतना ही नहीं इसके सम्बन्ध में एक प्रमाण यह दिया जाता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के कुछ संस्करण में इसकी १०६वीं गाथा में ग्रन्थ की गाथा संख्या का निर्देश करते हुए उसके कर्ता के रूप में जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण का स्पष्ट उल्लेख हुआ है।

पंचुतरेण गाहा सएण झाणस्स जं समक्खायं
जिनभद्द खमासमणेहिं कम्मविसोही करणं जइणो।।

प्रस्तुत गाथा में एक सामासिक पद 'कम्मविसोही करणं' है। किन्तु जहाँ तक मेरा ज्ञान है प्रस्तुत गाथा में कम्मविसोही करणं यह सामासिक पद जिनभद्रगणि का विशेषण तो नहीं हो सकता क्योंकि यहाँ इस सामासिक पद में प्रथमा या द्वितीया विभक्ति है जबकि जिनभद्रगणि क्षमा श्रमण में तृतीया बहुवचन या

पंचमी विभक्ति है। अतः कम्म विसोही करणं यह या तो जिनभद्रगणि कृत किसी अन्य ग्रन्थ का नाम हो सकता है या फिर प्रस्तुत झाणाज्झयण को ही कर्म विशुद्धि कारक कहा गया है। हमारी दृष्टि में यही विकल्प समुचित है क्योंकि ध्यान तप का ही एक प्रकार है और जैन दर्शन में तप को कर्म विशुद्धि या कर्म निर्जरा का हेतु माना जाता है। पुनः ध्यान में शुक्ल ध्यान ही ऐसी अवस्था है कि जिसके चतुर्थ चरण में सर्वकर्मों का क्षय हो जाता है। अतः कम्मविसोही करणं इस झाणज्झयण नामक ग्रन्थ का ही विशेषण है अतः इस समस्त पद को इस रूप में लेना चाहिए — कम्मविसोही करणं झाणाज्झयणं मेरी दृष्टि में इस गाथा का अन्वय भी इस रूप में करना होगा-

जिनभद्द खमासमणेहिं गाहा पंचुत्तरेण सएण जइणो कम्मविसोही करणं (झाणाज्झयणं) समक्खायं। इसी गाथा के आधार पर विनयभक्ति सुन्दर चरण ग़न्थमाला द्वारा प्रकाशित संस्करण में जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण को इसका कर्त्ता बतलाया गया है। किन्तु यहाँ एक समस्या यह है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के कुछ प्रकाशित संस्करणों में एक हरिभद्र की आवश्यक वृत्ति में मात्र १०५ गाथाए ही मिलती है। उसमें १०६वीं गाथा नहीं है। इस आधार पर पण्डित बालचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री ने ध्यान शतक की अपनी भूमिका में यह शंका प्रस्तुत की है कि, ध्यान शतक के कर्ता जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण नहीं है। यदि हम पंडितजी की इस बात को स्वीकार करके यह मान भी ले कि १०६वीं गाथा मूलग्रन्थकार की न होकर बाद में किसी के द्वारा जोड़ी गई है तो भी इस आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्ता जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण नहीं है क्योंकि स्वयं पंडित बालचन्द्रशास्त्री ने अपनी भूमिका में ही इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ने अपनी कृतियों यथा विशेषावश्यक भाष्य, जीत कल्प भाष्य आदि में भी लेखक के रूप में अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है। किन्तु इससे कर्ता के नाम के अनुल्लेख ध्यानाध्ययन की अन्यकृतकता सिद्ध नहीं होती है। हम उनसे सहमत होकर यह मान सकते है कि यह अंतिम गाथा बाद में किसी के द्वारा जोड़ी गई है किन्तु उनकी इस बात से प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्ता जिनभद्रगणि नहीं है यह फलित नहीं होता है क्योंकि इस सम्बन्ध में अन्य अनेक साधक प्रमाण भी उपस्थित है। यह भी

सत्य है कि इस १०६वीं गाथा में यह कहा गया है कि जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण के द्वारा यह ग्रन्थ रचा गया। यह कथन स्वयं लेखक के द्वारा तो नहीं किया जा सकता है, क्योंकि यदि लेखक स्वयं इस गाथा के रचयिता होते तो वे यह लिखते मुझ जिनभद्रगणि द्वारा रचा गया। अतः इस गाथा का अन्यकृतक और पक्षिप्त होना तो सिद्ध है; किन्तु पंडित बालचन्द्रजी का यह कहना है कि यह गाथा असंबद्ध सी है उचित नहीं क्योंकि प्रस्तुत गाथा में ग्रन्थ की गाथा संख्या का उल्लेख करते हुए ही ग्रन्थकार का उल्लेख हुआ है। अतः यह गाथा असंबद्ध नहीं कही जा सकती। अब प्रश्न यह उठता है कि यह गाथा प्रस्तुत कृति में कब जोड़ी गई? वस्तुतः यह गाथा प्रस्तुत कृति में हरिभद्र की टीका के पश्चात् ही जोड़ी गई होगी और यही कारण हो सकता है कि हरिभद्र ने इस गाथा पर टीका न लिखी हो। दूसरे यदि हरिभद्र स्वयं इस गाथा को जोड़ते तो मूल गाथाओं के बाद इस गाथा को अवश्य देते, किन्तु उनकी टीका में इस गाथा की अनुपलब्धि यही सिद्ध करती है कि यह गाथा आवश्यक की हरिभद्रीय टीका के बाद ही जुड़ी होगी। किन्तु हरिभद्रीय टीका के पश्चात् मलधारी हेमचन्द्र द्वारा जो टिप्पण लिखे गये उनमें भी इसके कर्ता के सम्बन्ध में कोई संकेत नहीं किया गया। इससे भी यही सिद्ध होता है कि यह गाथा मलधारी हेमचन्द्र के टिप्पण के बाद ही प्रक्षिप्त हुई होगी, अर्थात् ईसा की बारहवीं शती के पश्चात् ही प्रक्षिप्त हुई होगी।

यह सत्य है कि पं. दलसुखभाई मालवणिया ने गणधरवाद की प्रस्तावना में भी ध्यान शतक/झाणाज्झयण के जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण द्वारा रचित होने में संदेह व्यक्त किया है। उनके संदेह का आधार भी हरिभद्रीय टीका और मलधारी हेमचन्द्र के टिप्पण में कर्ता के नाम का अनुल्लेख ही है। पं. बालचन्दजी पं. दलसुखभाई के इस सन्देह से तो सहमत होते है, परन्तु पं. दलसुखभाई के इस निर्णय को स्वीकार क्यों नहीं करते हैं, कि यह आवश्यक निर्युक्तिकार की कृति है। पं. दलसुख भाई गणधरवाद की भूमिका में स्पष्टतः यह लिखते है कि हरिभद्रसूरि ने इसे जो शास्त्रान्तर कहा है, इससे यह स्वतन्त्र ग्रन्थ है यह तो निश्चित है किन्तु यह आवश्यक निर्युक्ति के रचयिता की कृति नहीं है यह उससे फलित नहीं होता है। उसके प्रारम्भ में योगीश्वर और जिन को नमस्कार किया गया है, इस कारण से हरिभद्रसूरि

इसे आवश्यक निर्युक्ति कार की कृति नहीं मानते हो, यह तो हो नहीं सकता। कारण यह है कि किसी नवीन प्रकरण को प्रारम्भ करते हुए निर्युक्तियों में कितनी ही बार तीर्थंकरों को नमस्कार किया गया है। अतः उसे निर्युक्तिकार भद्रबाहु (द्वितीय) की ही कृति मानना चाहिये।

यद्यपि इस ग्रन्थ की शैली एवं भाषा की निर्युक्ति की शैली एवं भाषा से निकटता है अतः उसे निर्युक्तिकार की कृति मानने में विशेष बाधा नहीं है पं. बालचन्द्रजी यह 'झाणाज्झयण' जिनभद्रगणि की कृति नहीं है इस हेतु पंडित दलसुख भाई के तर्क का अपने पक्ष में उपयोग करते है, किन्तु उनके इस निर्णय को कि यह ग्रन्थ निर्युक्तिकार की कृति है, क्यों स्वीकार नहीं करते है? वे इसका तार्किक खण्डन भी नहीं करते है। सम्भवतः उन्हें इसमें यही कठिनाई प्रतीत होती है कि, चाहे इसे निर्युक्तिकार की कृति माने या भाष्यकार की कृति माने दोनों ही स्थिति में यह श्वेताम्बर परम्परा की कृति सिद्ध होगी जबकि वे स्पष्टतः इसे निर्युक्तिकार और भाष्यकार की कृति नहीं मानते किन्तु वे यह भी सिद्ध नहीं कर पाते है कि यह किसी अन्य आचार्य की कृति है और वह कौन हो सकता है।

केवल इस आधार पर कि आचार्य हरिभद्र ने अपनी टीका में और आचार्य मलधारी हेमचन्द्र ने अपने टिप्पण में इसे जिनभद्रगणि की कृति नहीं बताया है—इसे जिनभद्र की कृति मानने से इंकार कर देना समुचित नहीं है। क्योंकि दोनों ने उनके सामने जो मूलपाठ रखा था उसी पर टीका या टिप्पणी लिखे। जब मूल में नमोल्लेख वाली गाथा उनके समक्ष थी ही नहीं तो वे किस आधार पर कर्ता के नाम का उल्लेख करते और जब जिनभद्रगणि की अपनी किसी भी कृति में अपना नाम देने की प्रवृत्ति ही नहीं रही तो फिर इस कृति वे अपना नाम कैसे देते?

पंडित बालचन्द्रजी ने इस ग्रन्थ को जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण की कृति मानने से जो इन्कार किया है, उसका संभवतः मुख्य कारण यही है कि वे इसे किसी श्वेताम्बर आचार्य की कृति मानना नहीं चाहते है किन्तु उनका यह मन्तव्य इसलिये सिद्ध नहीं हो सकता कि कृति मूलतः अर्धमागधी भाषा में ही लिखी गई है। जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण के पूर्ववर्ती एवं परवर्ती जो भी

दिगम्बर आचार्य हुए है उन सबने शौरसेनी प्राकृत में ही अपने ग्रन्थ लिखे है, जबकि यह ग्रन्थ पूर्णतः अर्धमागधी में ही पाया जाता है इस पर महाराष्ट्री प्राकृत का प्रभाव भी प्रायः अधिक नहीं देखा जाता है। वैसे अर्धमागधी और महाराष्ट्री प्राकृत में जो भी लेखन हुआ है वह प्रमुखतः श्वेताम्बर आचार्यों के द्वारा ही हुआ है। अतः इतना सुनिश्चित है कि यह ग्रन्थ श्वेताम्बर परम्परा में ही निर्मित हुआ है। पुनः आ. हरिभद्र ने इस पर जो टीका लिखी है, वह भी मूलतः श्वेताम्बर परम्परा की है।

अतः ग्रन्थकर्ता के रूप में जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण को स्वीकार करने में कोई बाधा नहीं आती है।

प्राचीन जैन आचार्यों की यह प्रवृत्ति रही है कि वे अपनी किसी रचना में अपने नाम का उल्लेख नहीं करते थे, यही कारण है कि विशेषावश्यक भाष्य, जीतकल्पभाष्य, विशेषणवती आदि ग्रन्थों में जिनभद्रगणि ने भी कहीं भी अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है किन्तु इस आधार विशेषावश्यक भाष्य, जीतकल्प भाष्य, विशेषणवती आदि को किसी अन्य की कृति नहीं माना जा सकता है। इससे तो ये ही सिद्ध होता है कि ध्यानशतक के कर्ता जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ही है और कर्ता के नाम के संबंध में किसी प्रकार की भ्रांति न हो, इसलिये परवर्तीकाल में किसी ने १०६वीं गाथा जोड़कर कर्ता का नाम निर्देश कर दिया है मात्र यही नहीं दिगम्बर आचार्य कुन्दकुन्द, मूलाचार के कर्ता वट्टकेर आदि ने भी अपनी कृतियों में कही अपने नाम का निर्देश नहीं किया है, ऐसी स्थिति में क्या समयसार मूलाचार आदि के कृर्तृत्व पर भी संदेह किया जायेगा?

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह सम्पूर्ण ग्रन्थ विक्रम की आठवीं शताब्दी में आचार्य हरिभद्र के समक्ष उपस्थित था। जिनभद्रगणि का काल लगभग छठी शताब्दी माना जा सकता है। जिनभद्र के पश्चात् और हरिभद्र के पूर्व जो प्रमुख श्वेताम्बर आचार्य हुए है उनमें तत्वार्थसूत्र के टीकाकार सिद्धसेन गणि, क्षमाश्रमण और चूर्णिकार जिनदास गणि को छोड़कर ऐसे कोई अन्य समर्थ आचार्यों के नाम हमारे समक्ष नहीं है, जिन्हें इस ग्रन्थ का कर्त्ता बताया जा सके। ये दोनों भी इसके कर्ता नहीं है यह भी सुस्पष्ट है। अतः यह

निर्विवाद रूप से सिद्ध है कि ध्यानशतक के रचनाकार श्वेताम्बर परम्परा के आचार्य जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ही है।

मेरी दृष्टि में इसे निर्युक्तिकार की रचना मानने में भी एक कठिनाई है कि आवश्यक निर्युक्ति में प्रतिक्रमणनिर्युक्ति की और कायोत्सर्ग निर्युक्ति की जो गाथाएं है उनसे ध्यानाध्ययन की एक भी गाथा नहीं मिलती है। वस्तुतः यह ग्रन्थ निर्युक्ति के बाद का और जिनदासगणि महत्तर की चूर्णियों के पूर्व भाष्यकाल की रचना है अतः इसके कर्ता विशेषावश्यक भाष्य के कर्ता जिनभद्रगणि ही होना चाहिए। जहाँ तक झाणाज्झयण के निर्युक्तिकार भद्रबाहु की रचना मानने का प्रश्न है। इस सम्बन्ध में हमारे पास में कोई भी ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं केवल यह मान करके की आचार्य हरिभद्र ने आवश्यक निर्युक्ति की व्याख्या में इसे समाहित किया है। मात्र इसी आधार पर इसे निर्युक्तिकार की रचना नहीं माना जा सकता है। क्योंकि आचार्य हरिभद्र ने आवश्यकनिर्युक्ति की टीका में अन्य-अन्य ग्रन्थों के भी संदर्भ दिये है और जिनके कर्ता निश्चित ही निर्युक्तिकार नहीं है अतः आचार्य हरिभद्र के टीका में उद्घृत होने मात्र से इसे निर्युक्तिकार की रचना मानना संभव नहीं है। निर्युक्तियों के बाद में भाष्यों और चूर्णि का काल आता है और प्रस्तुत कृति हरिभद्र के पूर्व होने से उसे भाष्यकार की रचना मानना ही उपयुक्त है क्योंकि चूर्णियाँ तो प्राकृत गद्य में लिखित है। अतः उनकी शैली भिन्न है। शैली भाषा आदि की अपेक्षा से इसे विशेषावश्यक भाष्य के कर्ता जिनभद्रगणि की कृति मान लेना ही संभव है।

रचना काल :-

जहाँ तक प्रस्तुत कृति के रचना काल का प्रश्न है यदि हम इसे जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण की रचना मानते है तो उनका जो काल है वही इसका कृति का रचनाकाल होगा। विचार श्रेणी ग्रन्थ के अनुसार जिनद्रगणि क्षमाश्रमण का स्वर्ग वास वीर संवत् ११२० में हुआ। तदनुसार उनका स्वर्गवास विक्रम संवत् ६५० या ईस्वी सन् ५९३ माना जा सकता है। धर्म सागरीपट्टावली के अनुसार जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण का स्वर्गवास काल वि. सं. ७०५ के लगभग माना जाता है तदनुसार वे ईस्वी सन् ६४९ में स्वर्गस्थ हुए चूंकि

विशेषावश्यक भाष्य और उसकी स्वपज्ञटीका उनकी अन्तिम कृति के रूप में माने जाते हैं अतः इतना सुनिश्चित है कि 'झाणाज्झयण' की रचना ईस्वीसन् की ७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही कभी हुई है। यह निश्चित है कि जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण शक्संवत ५३१ अर्थात् ई. सन् ६०९ के पूर्व हुए है क्योंकि शक्संवत ५३१ में लिखी विशेषावश्यकभाष्य ताड़पत्रीय प्रति के आधार पर प्रतिलिपि की गई अन्य ताड़पत्रीय प्रति आज भी जैसलमेर भंडार में उपलब्ध है। इस प्रकार विशेषावश्यक भाष्य की रचना शक् संवत् ५३१ अर्थात् ईस्वी सन् ६०९ से पूर्व ही हुई है। अतः विशेषावश्यक भाष्य का रचनाकाल सातवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के बाद नहीं ले जाया जा सकता है। अतः ध्यानशतक की रचना ईस्वी सन् की छठी शताब्दी के उत्तरार्ध और सातवीं शती प्रथम दशक के पूर्व ही माननी होगी।

पण्डित दलसुखभाई ने इसे निर्युक्तिकार भद्रबाहु की रचना होने की कल्पना की है यद्यपि हम पूर्व में ही इस कल्पना को निरस्त कर चुके है फिर भी यदि हम निर्युक्तियों का रचनाकाल ईसा की २री या ३री शताब्दी मानते है तो प्रस्तुत कृति के रचनाकाल की पूर्व सीमा ईसा की २-३ शताब्दी और उत्तर सीमा ईस्वी सन् की छठी शताब्दी का उत्तरार्ध माना जा सकता है।

पंडित बालचंद्र जी ने अपने प्रस्तावना में ध्यानशतक के आधार रूप स्थानांग आदि सभी अर्धमागधी आगमों को वल्लभी वाचना अर्थात् ईसा की पांचवी शताब्दी की रचना माना है, किन्तु यह उनकी भ्रांति ही है। वल्लभी वाचना वस्तुतः अर्धमागधी आगमों का रचनाकाल न होकर उनकी अंतिम वाचना का अर्थात् उनके संपादन काल है। उनकी रचना तो उसके पूर्व ही हो चुकी थी। स्थानांगसूत्र जो प्रस्तुत ध्यानशतक का आधार ग्रंथ माना जा सकता है। उसकी रचना उसके काफी पूर्व ही हो चुकी थी चूंकि स्थानांग सूत्र एक संकलनात्मक ग्रंथ है, उसमें नौ गण आदि के जो उल्लेख है वे भी उसे ईस्वी सन् की प्रथम-द्वितीय शताब्दी से परवर्ती सिद्ध नहीं करते है। स्थानांग सूत्र में आयारदशा आदि दस दशा ग्रंथों के नाम और उनकी विषयवस्तु का जो उल्लेख है वह समवायांग और नन्दीसूत्र में वर्णित उनकी विषयवस्तु से काफी प्राचीन है, वे नागार्जुनीय (तीसरी शती) और देवर्द्धिगति की वाचना के पूर्व के है और ध्यानाध्ययन में ध्यान के उसी प्राचीन रूप का अनुसरण देखा जाता है। यदि

ज्ञानाज्झयण अपर नाम ध्यान शतक का आधार स्थानांग सूत्र रहा हो, तो भी वह ईस्वी सन् की दूसरी शती से पूर्व वर्ती तथा पांचवी-छठी शती से परवर्ती नहीं है क्यों कि विक्रम की आठवीं शताब्दी और तदनुसार ईस्वीसन् सातवीं शती के उत्तरार्द्ध में हुए हरिभद्र स्वयं इसे न केवल उद्धृत कर रहे है, अपितु आवश्यक वृत्ति के अन्तर्गत उस पर टीका भी लिख रहे है।

अतः झाणाज्झयण अपर नाम ध्यानशतक का रचना काल – ईसा की दूसरी शती के पश्चात् और ईस्वी सन् शती के प्रथम दशक के पूर्व हो सकता है। फिर भी मेरी दृष्टि में इसे जिनभद्रक्षमाश्रमण की रचना होने के कारण ईस्वी सन् की छठी शती के अन्तिम चरण की रचना मानना अधिक उपयुक्त है।

ग्रन्थ की विषयवस्तु और उसका वैशिष्ट्य :-

प्रस्तुत ग्रन्थ में सर्वप्रथम मंगलगाथा में ग्रन्थ रचना के उद्देश्य को सातृ करने के पश्चात् दूसरी गाथा में ध्यान को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि अवध्यवसायों की एकाग्रता ध्यान है और उनकी चंचलता चित्त है यह चित्त भी तीन प्रकार का है– १. भावना रूप, २. अनुप्रेक्षारूप और ३. चिन्ता। भावना की अपेक्षा अनुप्रेक्षा में और अनुप्रेक्षा की अपेक्षा चिन्ता में चित्त की चंचलता वृद्धिगत होती जाती है। जबकि ध्यान में चित्त एकाग्र रहता है, सामान्य व्यक्तियों के लिए अन्तर्मुहुर्त तक चित्तवृत्ति का एकाग्र होना ध्यान है, किन्तु तेरहवें गुणस्थान वर्ती जिन जब चौदहवें गुणस्थान में योग निरोध करते है अर्थात् मन, वचन, ध्यान के चार प्रकारों अर्थात् १. आर्तध्यान, २.रौद्रध्यान, ३. धर्म ध्यान और ४. शुक्लध्यान को उल्लेख करते हुए प्रथम दो को भवभ्रमण का कारण और अन्तिम दो को मुक्ति का साधन बताया गया है। चार ध्यानों को चारगतियों से जोड़ते हुए जैन परम्परा में यह कहा गया है कि आर्तध्यान तीर्यञ्च गति का, रौद्रध्यान नरकगति का, धर्मध्यान मनुष्य या देवगतिका तथा शुक्लध्यान मोक्षगति का हेतु है। इसके पश्चात् प्रस्तुत ग्रन्थ में आर्तध्यान के चार प्रकारों १. अनिष्ट या अमनोज्ञ का संयोग, २. रोगादि की वेदना, ३. इष्ट का वियोग और ४. निदान अर्थात् भविष्य सम्बन्धी आकांक्षा का उल्लेख हुआ है। तत्पश्चात् यह बताया गया है कि, रोगादि की वेदना में और रोग मुक्ति के प्रयासों में भी वास्तविक मुनि को आर्तध्यान नहीं होता है, क्योंकि आलम्बन प्रशस्त होता है।

इसी प्रकार मोक्ष की इच्छा भी निदान रूप नहीं है, क्योंकि उसमें राग-द्वेष और मोह नहीं है। इसके पश्चात् आर्तध्यान के लक्षण-आक्रन्द, दैन्य आदि की चर्चा है। अन्त में आर्तध्यान में कौन सी लेश्या होती है और आर्तध्यान का स्वामी कौन है अर्थात् आर्तध्यान किन गुणस्थानवर्ती जीवों को होता है इसकी चर्चा है। इस प्रकार गाथा ६ से लेकर १८ तक बारह गाथाओं में आर्तध्यान सम्बन्धी विवेचन है। ज्ञातव्य है कि जैन धर्म में आर्तध्यान को ध्यान का एक रूप स्वीकार करके भी त्याज्य माना है।

आगे गाथा क्रमांक १९ से २२ तक चार गाथाओं में रौद्रध्यान के चार प्रकारों— १. हिंसानुबंधी, २. मृषानुबंधी, ३. स्तेयानुबंधी और ४. संरक्षणानुबधी के स्वरूपों का विवेचन हुआ है। इसके पश्चात् गाथा क्रमांक २३-२४ में यह बताया गया है कि रौद्र ध्यान स्वयंकरना, अन्य से करवाना अथवा करते हुए का अनुमोदन करना— ये तीनों ही राग, द्वेष और मोह युक्त होने से नरक गति का हेतु है। इसके पश्चात् २५वीं गाथा में आर्तध्यान में कौन सी लेश्या होती है इसकी चर्चा की गई है। तदनन्तर रौद्र ध्यान के लक्षणों की चर्चा की गई है। रौद्रध्यान को ध्यान के अन्तर्गत वर्गीकृत करके भी उसे हेय और नरकगति हेतु बताया गया है। आर्त और रौद्र ध्यान हेय या त्याज्य होने से प्रस्तुत कृति में इन दोनों का विवेचन अत्यन्त संक्षेप में मात्र २१ गाथाओ (७-२७ तक) में हुआ है। जबकि धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान का विवेचन लगभग ७८ गाथाओं में किया गया है।

धर्मध्यान की चर्चा के प्रसंग में प्रस्तुत ग्रंथ में धर्मध्यान का विवेचन निम्न बारह द्वारों अर्थात् विभागों में किया गया है— १. भावनाद्वार, २. देश अर्थात् ध्यान स्थल द्वार, ३. काल अर्थात् ध्यान का समय, ४. ध्यान के आसन, ५. धर्मध्यान के आलम्बन (स्वाध्याय), ६. ध्यान का क्रम, ७. ध्यान का विषय, ८. ध्याता की योग्यता जैसे अप्रमत्तादि, ९. अणुप्रेक्षा अर्थात् ध्यान में चिन्तनीय विषय १० धर्मध्यान की लेश्या (मनोवृत्ति) ११ धर्मध्यान के लक्षण, १२. धर्मध्यान फल या परिणाम। इसी क्रम में धर्म ध्यान के प्रकारों का भी उल्लेख हुआ है— १. आज्ञा विचय अर्थात् वीतराग परमात्मा ने क्या-क्या करने या नहीं करने का आदेश दिया है, उसका चिन्तन करना, २. अपाय विचय अर्थात् राग द्वेष, मोह, कषाय आदि की दोष रूपता का चिन्तन करना, ३. विपाक विचय-

कर्मों के उदय अर्थात् विपाक (फल) का विचार करना, ४. संस्थान विचय अर्थात् लोक के स्वरूप पर विचार करना। साथ ही यह भी बताया गया है कि अप्रमत्त संयत अर्थात् सातवें गुणस्थान से लेकर ११वें उपशांत मोह या १२वें क्षीणमोह गुणस्थानवर्ती मुनि धर्मध्यान के अधिकारी या ध्याता होते हैं। इसी प्रकार धर्मध्यान के ध्याता में तेजो, पद्म और शुक्ल, ये तीन शुभ लेश्याएं ही होती हैं। इस प्रकार हम देखते है कि प्रस्तुत कृति ध्यान शतक या ध्यानाध्ययन में गाथा क्रमांक २८ से ६८ तक ४१ गाथाओं में धर्मध्यान का विवेचन हुआ है। इसके आगे ३७ गाथाओं में शुक्लध्यान का विवेचन है।

प्रस्तुत कृति में धर्मध्यान के समान शुक्लध्यान के भी बारह द्वार बताये गये है किन्तु इनमें भावना, देश (स्थान), काल (ध्यान के योग्य समय) तथा आसन (ध्यान के आसन)– ये चार धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान में समान होने से शुक्लध्यान की चर्चा के प्रसंग में इनका पुनः उल्लेख नहीं किया है। अतः सर्वप्रथम शुक्ल के ध्यान के क्षांति (क्षमा), मार्दव (विनम्रता) आर्जव (सरलता और मुक्ति निर्लोभता)–ये चार आलम्बन बताये गये है अतः क्रोध, मान, माया और लोभ रूप चार कषायों के प्रतिरोधी चार धर्मों को शुक्ल ध्यान का आलम्बन कहा गया है। ध्यानक्रम की चर्चा करते हुए-इसमें यह बताया गया है कि विषय संकोच अर्थात् संसार के विषयों के प्रति अनात्म भाव जाग्रत करते हुए अर्थात् ये मेरे नहीं है, मैं इनसे भिन्न हूँ आत्म के शुद्ध ज्ञाता-द्रष्टा भाव पर चित्त को केन्द्रित करना–यह विषय संकोच का क्रम है। छद्मस्थ जीव, इसी क्रम शुक्ल ध्यान करता है, किन्तु वीतराग परमात्मा का शुक्ल ध्यान–योगनिरोध रूप शैलेषी अवस्था रूप होता है–यहाँ मन 'अमन' हो जाता है। इसके तीन दृष्टान्त दिये गये है–जैसे मान्त्रिक शरीर में व्याप्त जहर को डंक के स्थान पर लाकर निर्मूल कर देता है, वैसे ही शुक्लध्यानी अपने विषयों में व्याप्त मन को क्रमशः उसके विषय रूप विष को संकोच करते हुए आत्मतत्त्व पर केन्द्रित कर निर्विषय बना देता है। जिस प्रकार ईंधन को जलाते हुए ईंधन के अभाव में अग्नि स्वयं नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार मन अपने विषयों का त्याग करते हुए अन्त में अमन बन जाता है। जैसे कच्चे घड़े को अग्नि में पकाने पर उसकी आर्द्रता समाप्त हो जाती है वैसे ही ध्यानाग्नि में तपाने से मन की आर्द्रता अर्थात् विषयानुगामिता समाप्त हो जाती है। फिर मनयोग,

वचनयोग और काययोग का निरोध किस प्रकार और किस क्रम से होकर शैलेषी अवस्था प्राप्त होती है, इसकी चर्चा है। इसके पश्चात् शुक्ल ध्यान के चार चरणों- १. पृथकत्व वितर्क विचार अर्थात् आत्म-अनात्म का भेद विज्ञान, २. एकत्व वितर्क अविचार अर्थात् आत्मा के शुद्ध स्वरूप में स्थिरता, ३. सूक्ष्म क्रिया अनिवृत्ति अर्थात् योग निरोध में प्रवर्तन शील आत्म स्थिति और ४. व्युछिन्न क्रिया अप्रतिपाती अर्थात् त्रियोग निरोध की अन्तिम स्थिति या निर्विकल्प आत्म समाधि की अवस्था का विवेचन किया गया है। तत्पश्चात् शुक्लध्यान की चार अणुपेक्षाओं अर्थात् आस्रवहेतु, संसार की अशुभता, भवभ्रमण की अनन्त परम्परा और वस्तु की परिणमनशीलता का विचार किया गया है। यद्यपि ये अनुप्रेक्षाएं शुक्लध्यान की प्रारम्भिक अवस्था में ही सम्भव है। फिर शुक्ल ध्यान में लेश्या की स्थिति की चर्चा करते हुए कहा गया है कि शुक्लध्यान के प्रथम दो चरणों में शुक्ललेश्या, तीसरे चरण में परमशुक्ल लेश्या और चौथेचरण में लेश्या का अभाव होता है, लेश्या मनोवृत्ति रूप है, शुक्लध्यान के चतुर्थचरण में मन अमन हो जाता है अतः वहाँ लेश्या नहीं होती। तदनन्तर अवध (पूर्ण अहिंसा) असम्मोह विवेक और व्युत्सर्ग–इन शुक्ल ध्यान के चार लक्षणों की चर्चा की गई है। शुक्लध्यान में आत्मा स्वरूपघात (स्वहिंसा) और पर घात दोनों से रहित होता है, उसकी मोह-दशा का निवारण हो जाने उसमें असम्मोह और विवेकगुण प्रकट हो जाते है। फिर शुक्लध्यान का जो महत्त्वपूर्ण लक्षण व्युत्सर्ग है वह महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यही एक ऐसा लक्षण है जो शुक्ल ध्यान को अपने सम्यक् अर्थ में कायोत्सर्ग बना देता है, वीतराग ध्यान बना देता है।

सामान्यतया जनसाधारण ध्यान और कायोत्सर्ग को एक मान लेता है किन्तु दोनों में अन्तर है। तप के बारह भेदों में ध्यान और कायोत्सर्ग को अलग अलग माना है। ध्यान चित्त की एकाग्रता है, जबकि कायोत्सर्ग या व्युत्सर्ग निर्ममत्वता है। दूसरे शब्दों में ध्यान को किसी एक विषय पर मन का एकाग्र होना है, जबकि व्युत्सर्ग में मन अमन हो जाता है। यही कारण है कि व्युत्सर्ग ध्यान की उच्चत या अन्तिम अवस्था है। व्युत्सर्ग में निर्ममत्व के साथ-साथ त्याग भी है। व्यत्सर्ग पर में अनात्म वुद्धि या निर्ममत्व बुद्धि है। वह योग-निरोध है। वह वीतरागता की साधना से भी एक आगे बढ़ा हुआ चरम है। यही कारण है कि व्युत्सर्ग शुक्ल ध्यान का लक्षण कहा गया है।

एतदर्थ यह बताया गया है कि छद्मस्थ के सम्बन्ध में मन की एकाग्रता को ध्यान कहा जाता है जबकि वीतराग के सम्बन्ध में काय की निश्चलता को अर्थात् योग निरोध की शैलेषी अवस्था को ध्यान कहा जाता है। शुक्ल ध्यान के फल या परिणाम की चर्चा करते हुए कहा गया है कि शुक्ल ध्यान के प्रथम दो चरणों का फल शुभाश्रव जन्य अनुत्तर स्वर्ग का सुख है जबकि चरणों का फल कर्मक्षय और मोक्ष की प्राप्ति है। कहा गया है कि तप से कर्म निर्जरा होती है, कर्म निर्जरा से मोक्ष की प्राप्त होती है। ध्यान तप का प्रधान अंग है अतः वह मोक्ष का हेतु है। अन्त में अनेक दृष्टान्तों द्वारा ध्यान मोक्ष का हेतु है इस बात को सिद्ध किया गया है और कहा गया है कि ध्यान सभी गुणों का आधार स्थल है, दृष्ट और अदृष्ट सभी सुखों का साधक है अत्यन्त प्रशस्त है, वह सदैव ही श्रद्धेय, ज्ञातव्य एवं ध्यातव्य है। इस प्रकार प्रस्तुत ग्रंथ ध्यान की परिभाषा, ध्यान का स्वरूप, ध्यान के प्रकार, उनके प्रभेद स्वरूप लक्षण, आलम्बन, ध्येय विषय, लेश्या, विभिन्न ध्यानों के स्वामी या अधिकारी, ध्यान के योग्य स्थान, ध्यान के योग्य समय, ध्यान के आसन/मुद्रा आदि पर प्रकाश डालता है। इसके विवेच्य विषयों में ध्यान के भेद, प्रभेद, उनके लक्षण, आलम्बन आदि की चर्चा तो स्थानांग सूत्र और तत्वार्थ सूत्र पर आधारित है किन्तु ध्यान के स्थान काल आसन आदि की चर्चा इसकी अपनी मौलिकता है, जिसका परवर्ती ग्रन्थों जैसे ज्ञानार्णव, योगशाष्य आदि में भी अनुसरण किया गया है।

यद्यपि इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ के पूर्व में गुजराती और हिन्दी अनुवाद सहित कुछ तीन संस्करण प्रकाशित हुए। इनमें पू. भानुविजयजी (पू. भुवन भानुसूरिजी) का विवेचन सहित दिव्य दर्शन कार्यालय कालुपुर अहमदाबाद से प्रकाशित संस्करण एवं पं. खूबचन्द्रजी द्वारा व्याख्यायित एवं वीरसेवामन्दिर देहजी से प्रकाशित संस्करण महत्त्वपूर्ण है, किन्तु अब वे प्रायः अप्राप्य है। अतः प्राकृत भारती जयपुर डॉ. सुषमासिंघवी द्वारा अनुदित ध्यान शतक का एक नवीन संस्करण प्रकाशित करने जा रही है यह प्रसन्नता का विषय डॉ. सुषमा सिंघवी संस्कृत प्राकृत एवं जैन विद्या की समर्थ अध्येता एवं व्याख्याता है, उनके द्वारा अनुदित एवं व्याख्यायित यह कृति लोगों की ध्यान की ओर बढ़ती हुई रूझान को संपोषित एवं पल्लवित करे यही शुभकामना।

योगशतक

प्रस्तावना— डॉ. इन्दुकला हीराचन्द झवेरी

तत्त्वचिन्तक :—

आ. हरिभद्र ने जब प्रज्ञापना, दशवैकालिक, अनुयोगद्वार आदि जैन आगमों पर सर्वप्रथम संस्कृत टीका लिखने का आरम्भ किया तब तो उन्हें पूर्वाचार्य विरचित आगमों का संस्कृत में केवल विवरण ही देने का था। इससे उसमें उनकी कोई विषयगत नव्यता न दिखाई पड़े यह समझ में आ सके ऐसा है, परन्तु जब उन्होंने तत्त्वचिन्तन और आचार के एक वा अनेक मुद्दों को लेकर स्वतंत्र रूप से विचार करना और लिखना आरम्भ किया तब उसमें उनका व्यक्तित्व सर्वथा विलक्षणरूप से ही विकसित होता दिखाई देता है। पहले उनके तत्वचिन्तन को लेकर इस विधान की स्पष्टता करें।

तत्त्वज्ञान से सम्बद्ध एक या अनेक प्रश्नों पर आ. हरिभद्र ने लिखा तो है बहुत, पर उनके विशिष्ट प्रदान का स्पष्ट ख्याल आने के लिये यहाँ पर उनके वैसे ग्रन्थों को तीन भाग में हम बाँटेंगे— पहले भाग में अनेकान्तजयपताका— जैसे, दूसरे में शास्त्रवार्तासमुच्चय जैसे और तीसरे से षट्दर्शनसमुच्चय जैसे ग्रंथ आते हैं।

अनेकान्तजय पताका में आ. हरिभद्र जैन परम्परा के प्राणभूत माने जानेवाले अनेकान्तवाद का तर्कपुरस्सर स्थापन करते हैं और साथ ही साथ दूसरे प्रसिद्ध एकान्तवादों का[१] निरसन भी करते हैं, इतना ही नहीं, उस निरसन में गर्भित रूप से इतर वादों पर विजय प्राप्त करने की वृत्ति हो ऐसा भी उस जयपताका शब्द से तथा उस ग्रन्थ में प्रयुक्त 'शठोक्ति' जैसे शब्दों से ज्ञात होता है।

---

१. जैसे कि एकान्त-नित्यत्ववाद, एकान्त-अनित्यत्ववाद, एकान्त-सद्वाद, एकान्त-असद्वाद आदि।

न्यायसूत्र के प्रणेता अक्षपाद ने तत्त्वनिर्णय की सुरक्षा व स्थिरता के लिए जल्पकथा एवं वितण्डाकथा की आवश्यकता का समर्थन करते हुए कहा है कि जिस प्रकार उगते हुए पौधों की रक्षा के लिये काँटों की मेंड़ भी आवश्यक है उसी प्रकार अध्यात्मक्षेत्र में भी तत्त्वनिर्णय की स्थिरता के लिये विजयकथा और मात्र खण्डनपरायण चर्चा–वितण्डातक भी आवश्यक है[१]। अक्षपाद का यह विधान कुछ आकस्मिक नहीं है। उनके पहले कितनी ही शताब्दियों से भिन्न-भिन्न दार्शनिकों में जल्पकथा और वितण्डाकथा चली आ रही थी। नागार्जुन जैसे शून्यवादी विद्वानों द्वारा की गई परीक्षाएं और विग्रह अर्थात् खण्डन की वृत्ति देखते हुए ऐसा लगता है कि दार्शनिक मानस धीरे धीरे वितण्डा की ओर भी बढ़ता जा रहा था[२]। अक्षपाद के पीछे होनेवाले उद्द्योतकर आदि जैसों के निबन्ध[३] स्पष्ट सूचित करते हैं कि प्रकाण्ड पण्डित भी विजयकथा में अधिक रस लेते थे। दार्शनिक गोष्ठियों में तत्त्वजिज्ञासाप्रधान वादकथाका[४] स्थान नहीं था ऐसा तो नहीं है, पर यह स्थान जल्प और वितण्डाकथा की अपेक्षा गौण और विरल होता जा रहा था। दार्शनिक पण्डितों की ऐसी अध्ययन अध्यापन तथा चिन्तन, मनन एवं लेखन की प्रणालिकामें पला पोसा और उसी के अनुसार अध्ययन करने वाला चाहे जैसा विद्वान् क्यों न हो, फिर भी जल्प व वितण्डता की कथा से सर्वथा अलिप्त रहकर केवल वादकथा में ही वह रस ले ऐसी अपेक्षा रखना सामान्य मर्यादा से बाहर की बात है। विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि आ. हरिभद्र ने जब अनेकान्तजयपताका लिखी तब बहुमुखी दार्शनिक विद्वत्ता होने पर भी उनका मानस प्रतिंद्वादियों के ऊपर विजय प्राप्त करने

---

१. तत्त्वाध्यवसायसंरक्षणार्थं जल्पवितण्डे, बीजप्ररोहसंरक्षणार्थं कण्टकशाखा वरणवत्।- न्यायसूत्र ४.२.५०।

२. देखो पं. सुखलालजी का लेख तत्त्वोपप्लवसिंह, भारतीय विद्या भाग २, अंक १, तथा नागार्जुनकृत माध्यमिककारिका एवं विग्रहव्यावर्तिनी।

३. न्यायवार्तिक, न्यायमंजरी आदि।

४. वाद, जल्प और वितण्डाके अर्थ एवं इतिहास के लिये देखो पं. सुखलालजी द्वारा सम्पादित प्रमाणमीमांसा भाषाटिप्पण पृ. ११० से।

की ओर कुछ कुछ झुका हुआ था। इसीलिये उन्होंने प्रतिवादियों की उक्तियों का शठोक्ति जैसे विशेषणों से निर्देश किया है[1] और अपने पक्षकी चर्चा को जयपताका कहकर उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। ऐसा होने पर भी अनेकान्तजयपताका में उनका सूक्ष्म चिन्तन एवं बहुश्रुतत्व जरा भी निम्न कोटिका नहीं है।

परन्तु आ. हरिभद्र की आत्मा रूढ़ि एवं परम्परा में आबद्ध नहीं थी। उन्हें जिस तरह जन्मसिद्ध वैदिक परम्परा का त्याग एवं श्रमणत्व का स्वीकार करने में देर न लगी, उसी तरह अपनी विजिगीषु वृत्ति को दबाकर और तत्त्वजिज्ञासुवादकथा का अवलम्बन लेकर दार्शनिक चर्चा करने में तनिक भी संकोच नहीं हुआ। इसीलिये उन्होंने शास्त्रवार्तासमुच्चय जैसे ग्रन्थ लिखने में इसी वादकथा अथवा उनकी अपनी परिभाषा में कहें तो धर्मकथा[2] का आश्रय लिया। अनेकान्तजयपताका में चर्चा का विषय तो जैनपरम्परासम्मत अनेकान्त ही है और शास्त्रवार्तासमुच्चय में भी दृष्टि तो अनेकान्तकी ही है। उसमें आत्मतत्त्व और उससे सम्बद्ध अनेक छोटे बड़े विषयों की अनेकान्तदृष्टि से स्थापना की गई है। ऐसी स्थापना करते समय आ. हरिभद्र ने जैनदृष्टि के साथ सम्मत न होनेवाले जैनेत्तर वैदिक एवं बोद्ध आदि सभी वादों की तलस्पर्शी समीक्षा की है। इस समीक्षा में उन्होंने अनेकान्तजयपताका की भाँति तार्किक पद्धति का उपयोग तो किया है, परन्तु इसमें उन्होंने इतर वादियों की ओर जो उदार वृत्ति एवं महानुभावता दिखलाई है वह उनके पहले के या बाद के किसी भी जैन अथवा जैनेत्तर विद्वान द्वारा की गई समीक्षा में शायद ही दिखाई दे।[3] अनेकान्तजय पताका में जिन एकान्त वादों का शठोक्तिरूप से उन्होंने निर्देश किया है उन्हीं वादों के प्रसिद्ध पुरस्कर्ता कपिल, बुद्ध, पतंजलि जैसे अनेक आचार्यों की दिव्य, महात्मा एवं महामुनि

---

१. देखो अनेकान्तजयपताका में—शठोक्तिभिर्मोहितान् जडान् (श्लो० ६), तुच्छत्वाद्वा शठोक्तीनाम् (श्लो० ७), शठोक्तिविमूढजा— (श्लो० ९)।

२. देखो अष्टकप्रकरणक। १२वाँ वादाष्टक।

३. उदयनाचार्य ने कुसुमाञ्जलि के आरम् में ईश्वरोपासना के बारे में लिखते समय भिन्न-भिन्न पक्षों के अभिप्रायों का समन्वय किया है, जो उल्लेखनीय है।

जैसे विशेषणों से प्रशंसा करते हुए शास्त्रवार्तासमुच्चय में कहा है कि ऐसे ऋषि मिथ्या निरूपण नहीं कर सकते। ऐसा कहकर उन्होंने कपिल, बुद्ध जैसे प्रवर्तकों के उन उन मन्तव्यों का हार्द अपने सिद्धान्त के साथ अविसंवादी बने इस तरह फलित करने का प्रयत्न किया है।

बौद्ध तार्किक धर्मकीर्ति और शान्तरक्षितने भी विरोधी वादों की समीक्षा की है, परन्तु उन्होंने अपनी एक भी समीक्षा में बौद्ध तथा बौद्धेतर वादों का आ. हरिभद्र की भाँति समन्वय नहीं किया है। शान्तरक्षित ने तत्त्वसंग्रह में सांख्यसम्मत प्रकृतिवाद की और कूटस्थनित्यवाद की परीक्षा की हैं, पर वह सिर्फ सांख्यमत के खण्डनतक ही सीमित है, जबकि आ. हरिभद्र सांख्यमत की समीक्षा करने के पश्चात् प्रकृतिवाद का जो रहस्योद्घाटन करते हैं वह जैनसम्मत कर्मप्रकृतिवाद की याद दिलाने के साथ ही दूर भूतकाल में इन दोनों वादों के पीछे कोई समान भूमिका रही होगी ऐसा सूचन भी करता है। वह कहते हैं कि जैसे जैनदृष्टि से मूर्तकर्म और अमूर्त आत्मा का सम्बन्ध घट सकता है वैसे ही सांख्यसम्मत प्रकृतिवाद भी यथार्थ समझना चाहिए, क्योंकि कपिल ने उसका निरूपण किया है और कपिल तो दिव्य महामुनि हैं[१]।

उद्द्योतकर[२] जैसे नैयायिकों ने ईश्वरकर्तृत्ववाद का समर्थन तो किया है, पर उन्होंने विरोधी पक्ष के साथ इस वादका शक्य समन्वय नहीं दिखलाया। इसी प्रकार शान्तिरक्षितने ईश्वरकर्तृत्ववाद का निरसन करते समय विरोधी पक्ष के साथ तनिक भी सहानुभूति नहीं दिखलाई। इनके विपरीत आ. हरिभद्र ईश्वरकर्तृत्ववाद की समीक्षा भिन्न भूमिका का आश्रय लेकर ही करते हैं।

---

१. मूर्तयाऽप्यात्मनो योगो, घटेन नभसो यथा।
उपघातादिभावश्च, ज्ञानस्येव सुरादिना।।
एवं प्रकृतिवादोऽपि विज्ञेयः सत्य एव हि।
कपिलोक्तत्वतश्चैव, दिव्यो हि स महामुनिः ।।

— शास्त्रवार्तासमुच्चय, श्लो० २३६-७

२. देखो न्यायसूत्र ४.१.१९-२१ का न्यायवार्तिक।

ईश्वर सृष्टि का कर्ता नहीं है अपने इस मत का समर्थन करने पर किस दृष्टि से ईश्वर को कर्ता कहा या माना जा सकता है अथवा उसकी उपासना की जा सकती है इसका रहस्य भी खोलकर वह दिखलाते हैं। वह कहते हैं कि- साधु-पुरुषों ने ईश्वरकर्तृत्ववाद को इस तरह युक्त माना है—ईश्वर अर्थात् परमात्मा। उसके कहे हुए व्रतों का आसेबन करने से मुक्ति प्राप्त होती है और आसेवन न करने से संसार में भटकना पड़ता है, अतएव निमित्तरूप से ईश्वर का कर्तृत्व मानने में कोई दोष नहीं है। जो श्रद्धालु परमेश्वर को कर्ता मानकर शास्त्रों में श्रद्धा रखते हैं उनकी मनोवृत्ति एवं अधिकार को ध्यान में रखकर कर्तृत्ववाद का उपदेश दिया गया है। वैसे देखा जाय तो आत्मा स्वयं ही शक्तिधान होने से ईश्वर है और आत्मा तो कर्ता है ही। इससे कर्तृत्ववाद बखूबी घट सकता है। शास्त्रकार तो निःस्पृह और उपकारपरायण होते हैं, तो फिर वे युक्तिविरुद्ध क्यों बोलने लगे? अतएव कल्याणाकांक्षी पुरुष को चाहिए कि वह उनके वक्तव्य का तात्पर्य तर्कशास्त्र के अनुसार खोजे[१]। ऐसा कहकर वह ईश्वर के कर्तृत्व के बारे में अनेकान्तदृष्टि का विकास करते हैं।

---

१. ततश्चेश्वरकर्तृत्ववादोऽयं युज्यते परम्।
सम्यग्न्यायाविरोधेन यथाऽऽहुः शुद्धबुद्धयः।।
ईश्वरः परमात्मैव तदुक्तव्रतसेवनात्।
यतो मुक्तिस्ततस्तस्याः कर्ता स्याद् गुणभावतः।।
तदनासेवनादेव यत्संसारोऽपि तत्त्वतः।
तेन तस्यापि कर्तृत्वं कल्प्यमानं न दुष्यति।।
कर्ताऽयमिति तद्वाक्ये यतः केषाञ्चिदादरः।
अतस्तदानुगुण्येन तस्य कर्तृत्वदेशना।।
परमैस्वर्युक्तत्वान्मत आत्मैव चेश्वरः।
स च कर्तेति निर्दोषः कर्तृवादो व्यवस्थितः।।
शास्त्रकारा महात्मानः प्रायो वीतस्पृहा भवे।
सत्त्वार्थ सम्प्रवृत्ताश्च कथं तेऽयुक्तभाषिणः।।
अभिप्रायस्ततस्तेषां सम्यग्मृग्यो हितैषिणा।
न्यायशास्त्राविरोधेन यथाऽऽह मनुरप्यदः।।
—शास्त्रवार्तासमुच्चय, श्लो० २०३-९

इसी प्रकार धर्मकीर्ति[१] एवं शान्तरक्षितने जैनसम्मत स्याद्वाद या अनेकान्त दृष्टिकी समीक्षा करते समय अपने से भिन्न दृष्टिबिन्दु का मर्म ढूँढ़कर समन्वय करने का तनिक भी प्रयत्न नहीं किया है, जबकि आ. हरिभद्र ने विज्ञानवादी तथा शून्यवादी बौद्ध मन्तव्य की समीक्षा करने पर भी एक अतिगम्भीर व सूक्ष्मदर्शी दार्शनिक के योग्य शोभनीय भाषा में विज्ञानवाद एवं शून्यवाद का रहस्य बतलाने के साथ ही साथ उनके पुरस्कर्तारूप से सम्मानित तथागत के प्रति अपना हार्दिक बहुमान अभिव्यक्त किया है। वह कहते हैं कि—क्षणिकवादकी भांति विज्ञानवादका भी उपदेश बुद्ध ने योग्य अधिकारी के ऊपर करुणा लाकर आसक्ति एवं बाह्यार्थपरायमता दूर करने के लिए दिया है, क्योंकि बुद्ध जैसे महामुनि का उपदेश रहस्यशून्य नहीं हो सकता। इसी प्रकार बुद्ध ने शून्यवाद का उपदेश दिया है ऐसा कहा जाता है, परन्तु वह भी विशिष्ट प्रकार के अधिकारियों के हित की दृष्टि से ही दिया गया प्रतीत होता है[२]।

शंकराचार्य ने दूसरे अनेक विरोधी द्वैतवादियों के वादों की भाँति अनेकान्तवादकी भी पर्यालोचना की है[३]। उन्होंने उस पर्यालोचना में केवल शाब्दिक विरोध

---

१. प्रमाणवार्तिक ३. १८०—२

२. अन्ये त्वभिदधत्येवमेतदास्थानिवृत्तये।
क्षणिकं सर्वमेवेति, बुद्धेनोक्तं न तत्त्वतः।।
विज्ञानमात्रम्प्येवं, बाह्यसंगनिवृत्तये।
विनेयान् कांश्चिदाश्रित्य, यद्वा तद्देशनार्हतः।।
न चैतदपि न न्याय्यं, यतो बुद्धो महामुनिः।
सुवैद्यवद्विना कार्य, द्रव्यासत्यं न भाषते।।

एवं च शून्यवादोऽपि, तद्विनेयानुण्गुयतः।
अभिप्रायत इत्युक्तो, लक्ष्यते तत्त्वेदना।।
—शास्त्रवार्तासमुचच्य श्लो० ४६४-६ तथा ४७६

३. ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य २.२. ३३-६

की भूमिका का आश्रय लेकर विजिगीषु कथा ही की है, जबकि आ. हरिभद्र ने औपनिषद अद्वैतमतकी पर्यालोचना करते समय जैनद्वैतवादकी स्थापना करने पर भी अद्वैतका रहस्य क्या हो सकता है यह अपनी दृष्टि से बताने का प्रयत्न किया है। वह कहते हैं कि–सर्वत्र समभाव पैदा करने के उद्देश्य से अद्वैत का उपदेश दिया गया है[1]।

ऐसा प्रतीत होता है कि आ. हरिभद्र जैसे-जैसे नये-नये दार्शनिक ग्रन्थ लिखने में प्रवृत्त होते गये वैसे-वैसे उनमें मध्यस्थवृत्ति[2] तथा उसके परिणामस्वरूप एक प्रकार की विशिष्ट प्रज्ञाका भी विशेष और विशेष उदय होता गया। सम्भवतः इसीलिए तत्कालीन दार्शनिक क्षेत्र में प्रचलित खण्डनात्मक वादविवाद उन्हें शुष्क, निरर्थक[3] और मूलध्येय के लिये विधातक प्रतीत हुए हों। चाहे जो कुछ हो, इतना तो निश्चित है कि भिन्न-भिन्न वादों के सिर्फ खण्डन में ही वह फँसे न रहे। उन्हें जो सत्य प्रतीत हुआ उसके साथ वे सब वाद किस प्रकार अविसंवादी बन सकते हैं यह दिखलाने की कला उन्होंने सिद्ध की और इस प्रकार तत्त्वचिन्तन तथा निरूपण का एक विधायक मार्ग भी उन्होंने दिखलाया।

---

१. अन्ये व्याख्यानयन्त्येवं समभावप्रसिद्धये।
अद्वैतदेशना शास्त्रे निर्दिष्टा न तु ततत्वतः।।
—शास्त्रवार्तासमुच्चय श्लो० ५५०

२. पक्षपातो न मे वीरे न द्वेषः कपिलादिषु।
युक्तिमद्वचनं यस्य तस्य कार्यः परिग्रहः।।
—लोकतत्त्वनिर्णय श्लो० ३८

आत्मीयः परकीयो वा कः सिद्धान्तो विपश्चिताम्।
दृष्टेष्टाबाधितो यस्तु युक्तस्तस्य परिग्रहः ।।
—योगबिन्दु श्लो० ५२५

३. .... वादग्रन्थास्त्वकारणम्।।
—योगबिन्दु श्लो० ६५

वादांश्च प्रतिवादांश्च वदन्तो निश्चितांस्तथा।
तत्त्वान्तं नैव गच्छन्ति तिलपीलकवद्गतौ।।
मुक्त्वाऽतो वादसंघट्टमध्यात्ममनुचिन्त्यताम्।
नाविधूते तमःस्कन्धे ज्ञेये ज्ञानं प्रवर्तते ।।
—योगबिन्दु श्लो० ६७ तथा ६९

ये दोनों श्लोक चरकसंहिता (सूत्रस्थान, अध्याय २५, श्लोक २७-८) में अक्षरशः मिलते हैं।

सिंहल की राजकन्या

सुदर्शना

आचार्यश्री विजयविशालसेनसूरिजी म. सा.

रानी बोली, बेटी यह क्या अनाप- शनाप बक रही है? चल मेरे साथ थोड़ी देर आराम कर। तेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं लगता है। विचार वायु मालूम देता है, चल।

नहीं माँ, मुझे कुछ नहीं हुआ है। मैं बिलकुल ठीक हूँ। आप आराम को कह रही हो? इस दुनिया में जीव को कहाँ आराम मिल सकता है? यहाँ तो है शोक, संताप पीड़ा, रोग, बुढ़ापा और मौत। मिलन और जुदाई, परिश्रम और निराशा।

सब ही जैसे हैरत में गर्क हो गये कुमारी की बातों से! बहकी-बहकी बेकार की बातें। पूछे क्या और बके क्या!

राजा ने पूछा, यह क्या नादानी है? कुछ अपना हाल भी है मालूम कि अपने आपको निराधार बतला रही हो? बही जा रही हो ख्याल के सपनों में।

नहीं पिताजी! जरासी भी नादानी की बात नहीं है। आप मेरी कहानी सुनेंगे तब पता चलेगा आपको मेरे बारे में, कि मैं कितनी व्यथित और निराधार हूँ।

अरे, अरे, यह तू क्या कह रही है? हम सबके होते हुए तुझे क्या कमी है। क्या हो गया है तुझे? अजी, देखियेना! एक पल में मेरी बेटी को क्या हो गया? रानी व्याकुल हो उठी।

हाँ माँ! पिताजी, मैं यही तो कह रही हूँ कि एक पल में क्या से क्या हो सकता है–क्या से क्या हो गया है?

क्या हो सकता है! क्या हो गया है!

बात बड़ी है, पर मैं आपको संक्षेप में कहती हूँ। आप सुनिये। सारी सभा में सन्नाटा छा गया। सुदर्शना ने अपनी कहानी कहनी शुरू की—

जगत् प्रसिद्ध भृगुकच्छ नगर की सीमा से सटा हुआ कोरंट नामक वन है जो असंख्य झाड़ तथा अगणित सघन लताओं से व्याप्त होने के कारण दुर्गम है। पास में ही कल-कल निनादिनी नर्मदा नदी बारह ही महीने बहती रहती है। वन हस्ती उसमें नहाते व क्रीड़ा करते रहते हैं।

इस दुर्गम वन मार्ग में कुछ पगडंडियाँ थीं। जिन पर मार्ग के जानने वाले ही आते-जाते थे। उस बियाबान वन में एक बड़ा भारी वड़ का पेड़ था। उसकी डालियाँ दूर-दूर तक फैली थीं, लम्बी-लम्बी जटाएँ जमीन में जा उतरी थी उसकी जड़ें जमीन में गहरी गई थीं और उसके बड़े बड़े हरे भरे पत्तों के कारण व्रह अति सुन्दर और समृद्ध दिखाई पड़ती था। यही कारण था कि उस पर अनेक पक्षी निवास करते थे। शाम के वक्त तो वहाँ परिंदों का मेला लगता था। वे फुदकते और चहकते थे तो सारा माहोल बड़ा प्यारा सुहाना लगता।

उसी बटवृक्ष पर एक चील का जोड़ा बसता था। मादा चील सगर्भा बनी। नर तो आलसी और मतलबी था। आखिर अकेली चील ने घोंसला बनाया। आराम को जी चाहता पर बैठी रहे तो खाना कौन दे? नर उसे किसी भी तरह की मदद नहीं करता था। चील घोंसले की चिंता करती खुराक की तलाश में जो कुछ भी मिल जाता संतोष कर लेती और घोंसले पर लौट आती। समय पर उसने प्रसूति की असह्य पीड़ा सहन कर दो बच्चों को जन्म दिया। वह पीड़ा व भूख से बड़ी परेशान थी। उसके बच्चे भी भूखे थे। उसको स्वयं को गये बिना और कोई चारा न था। उसने हिम्मत जुटाकर जाने की तैयारी की तो अचानक आसमान धूल से भर गया। दरख्तों को उखाड़ फैंकती आंधी ने बड़ा उत्पात मचाया। धरती और आकाश धूल के बवंडर से एकाकार हो गये। कुछ भी नजर नहीं आता था। सारा झाड़ डोलता था और सू.......... सू.......... करती आंधी दौड़ी जा रही थी। चील की चिंता और बढ़ गई। इतने में तो वर्षा होने लगी, बिजली चमकने व बादल गरजने लगे। बच्चों की दशा बड़ी दयनीय हो गई। चील ने उन्हें अपनी पंख के नीचे छुपा के रखे और भीगती रही व कांपती रही। अभी रुके भी रुके पर बरसात रुकी ही नहीं। बच्चे बेचारे भूखे और काँपते। चील भी तन मन से दुःखी-भूखी!

सात-सात दिन से अविरत और अविरल धारा से धरा पर वर्षा हो रही थी। अब बच्चों के जीने की उम्मीद भी खत्म होती चली जा रही थी कि वर्षा धीमी पड़ गई..... और रुक भी गई। चील के लिए तो जैसे बड़े त्यौहार का वक्त आया। उसके मुँह पर आशा का नूर चमक उठा। बड़े प्यार से उसने बच्चों की ओर देखा। कैसे अधमुए हो गए थे। कोई बात नहीं मेरे बच्चों! अब घबड़ाने की जरूरत नहीं। सारी आफत और मुसीबत चली गई।

निर्बल और निराश चील को तेज भूख भी लगी थी बच्चों की तो दशा ही भूख ने बिगाड़ रखी थी। किन्तु इन बेचारों को खाना कौन दे? आखिर चील ने सारी हिम्मत इकट्ठी की- बच्चों की ओर वत्सल नजर से देखा और बच्चों के लिए आहार खोजने उड़ पड़ी। एक पल में तो वह आसमानी हवा में तैरने लगी। अपनी पैनी नजर से चारों ओर देखती वह उड़ी जा रही थी। कभी बच्चों और घोंसले का ख्याल आता कि जल्दी ही कुछ मिल जाय तो ले चलूं। पानी ने या तो जमीन को धो डाला था या तालाब बना डाला था। मरी हुई चूही मिल जाय तो भी काम बन जाय। ऊँची नीची उड़ानें भरती आशा-निराशा में डोलती वह काफी दूर निकल खटीकों के बास में जा पहुँची।

वहाँ मरे हुए मवेशी के उधड़े चमड़े का कलेवर देखी और उसकी आंखे चमक उठी। थका चेहरा भी मुस्कुरा उठा। बड़ी चतुराई से उसने कुत्तों और गिद्धों के घेरे में पड़ा मांस खण्ड उठा और स्फूर्ति से ऊपर उड़ने लगी। उसके आनन्द का कोई पार ही नहीं था।

आहा..........! कितने दिन के भूखे मेरे बच्चे? इतने से तो हम सब खूब अच्छी तरह धाप जायेंगे। मैं अभी पहुँचती हूँ। वो दिख रहा मेरा बरगद का पेड़ और चील की खुशी का कोई पार ही नहीं था।

यहाँ जीव सोचता क्या है और होता क्या है, और कितनी जल्दी होता है?

बेचारी अपने मार्ग आनन्द से उड़ी जा रही चील को एकाएक ही किसी म्लेच्छ ने ऐसा बाण मारा कि उसकी छाती में जा लगा। चील अचानक मार से चीख उठी। बड़ी कोशिश की मगर अब उसका उड़ना मुश्किल हो रहा

था। भूख, फिर छाती में बाण-अपार वेदना और बच्चों की भारी चिंता। चिल्लाती हुई वह जमीन पर आ गिरी। आक्रन्दन करने लगी, तड़पने लगी।

सोचने लगी कौन दुष्ट होगा? वह अकारण बैरी जिसने मुझे बाण मारा। कुछ नहीं तो वह बाण ही मेरी छाती से कोई निकाल फैंके तो भी मैं किसी तरह चलती-चलती वहाँ तक पहुँच जाऊँ?

कुछ बल-साहस जुटा संकल्प के जोर से वह उड़ी लेकिन तुरत ही गिर पड़ी। अब वह उड़ भी नहीं सकती थी फिर भी हिम्मत नहीं हारी। अपने आपको घसीटती घसीटती वनखण्ड में ले आई सामने ही था वह वटवृक्ष जिसपर खुद का बनाया घौंसला था और उसमें प्राण प्यारे बच्चे। मेरे बच्चों! मैं अभी आई! तुम्हें जोरों की भूख लगी है! मैं जानती हू पर क्या करूं! अरे, अब तो मुझसे हिला डुला भी नहीं जाता। आंखे जैसी अंधी हो रही है और चील से पंजों से मांस खंड छूट गया। छाती में तीर लगा है जिसने कलेजे को छेद डाला है। चील एक करवट बेहोशी में पड़ी रही। कुछ होश आते ही वह अपने बच्चों के पास जाने की कोशिश करती है लेकिन नाकामी ही हाथ आती है। बड़ी तिलमिलाती है फिर सहम कर रह जाती है। उसकी आंखों में खुन्नस आ गया। वह चीख उठी, उसे भारी क्रोध चढ़ा कि उस दुष्ट ने बेमतलब मुझे तीर क्यों मारा? क्या बिगाड़ा था मैंने उसका? मेरे बच्चों तक अब मैं कैसे पहुँचूंगी? यह सामने ही तो दिखाई पड़ रहा है। एक छलांग उड़ूं तो सीधी घोंसले में। कितनी बेसब्री से बच्चे मेरा इंतजार करते होंगे? अब उनका क्या होगा? क्या मैं वहाँ तक नहीं पहुँच पाऊँगी? ओर...... अरे.......... अब तो सहन भी नहीं होती पीड़ा।

काफी खून बह चुका था। पीड़ा का कोई पार नहीं था। बच्चों के विरह से मन भी बड़ा व्यथित था। चारों ओर निराशा ने घेर रक्खा था। वह आक्रन्दन कर उठी। मेरे बच्चों ! मैं यहाँ बेबस पड़ी हूँ। तुम ही यहाँ आ जाओ! ओह तुम कैसे आ सकोगे? तुम्हारे तो पंख भी नहीं आये। क्या यूं ही भूखे मर जाओगे! मेरा राह देख रहे हो? अरे! अरे कोई मेरे बच्चों को यहीं ले आओ। कोई इन्हें बचाओं नहीं तो कोई पक्षी उन्हें जिंदा ही खा जाएगा। देखो तो सही मैं तुम्हारे लिए कितना सारा खाना लाई हूँ।

उसने वापस मांस का टुकड़ा पकड़ा फिर कोशिश की उड़ने की, लेकिन हजारों कोसों की उन्मुक्त उड़ान भरने वाली चील हिल भी नहीं सकी। सारा शरीर शिथिल और दर्दिल हो गया था। तीर का जहर फैल चुका था। उसे विश्वास हो गया कि अब तो यहाँ से खिसकना भी मुमकिन नहीं है। वह हताश हो बड़ की ओर देखने लगी।

सुदर्शना की आंखों से आँसू बह रहे थे। सारा शरीर काँपता था और चेहरे से वेदना टपकती थी। चील की दर्दभरी दास्तान सुनने वाले सारे सभासदों की आंखें भी गीली हो गई या आँसू बहाने लग गई।

एक बड़ी आह भर कर सुदर्शना आगे बोली। कितनी बड़ी लाचारी एक पल में जीव पर आ गिरती है। कभी-कभी तो समर्थ लोग भी घुँटने टेक देते हैं और बालक की तरह रो लेते हैं। बेचारी सुगली चील की क्या औकात? सामने ही दिखते घोंसले तक तो वह पहुँच नहीं पाई। बच्चों को खाना देना तो दूर किनारे रहा उन्हें वो अपना संदेश भी नहीं पहुँचा पाई। कौन सुने और कौन समझे उस चील को? बच्चों के लिए वह सिफारिश भी किससे करे कि भई! मेरे बच्चों को थोड़े दिन सम्हाल लेना मैं तो जाती हूँ पर तुम वे उड़ने लग जायें वहाँ तक जरा सम्हाल लेना।

चील को ममता और क्रोध दोनों ने घेर लिया। ममता के बिना तो क्रोध भी संभव कहाँ? मेरी और मेरे बच्चों की उस दुष्ट ने एक ही बाण में क्या हालत कर डाली। वह हत्यारा यहाँ आवे तो मैं ....

क्रोध........... ममता............ निराशा............. पीड़ा में डूबी चील रोती बिसुरती वहाँ प्रहरों पड़ी रही–कभी होश में तो कभी बेहोशी में। कौन उसकी सुध-बुध ले?

मगर याद रखियेगा! धर्म आपकी अवश्य सम्हाल लेगा। हाँ, यदि आपने धर्म को जाना माना और आराधा होगा तो। आप चाहे धर्म को आराधते आराधते छोड़ भी देंगे तो भी धर्म आपको नहीं छोड़ेगा, कहीं भी आप हों, धर्म आप को सम्हालेगा।

यही कारण है कि जहाँ चील अधमरी दशा में पड़ी थी उस रास्ते से दो मुनिराज जा रहे थे। उनकी नजर तपड़ती चील पर पड़ी और वे दयाके सागर में थम गये। उनका हृदय करुणा से भर आया। वे चील के करीब आये और अपना दाहिना हाथ ऊंचा उठाकर अभय मुद्रा में बोले चील! घबड़ा मत, हमसे डरना भी नहीं। हमसे तुझे कोई नुकसान नहीं। ओह! तुझे कातिल तीर लगा है, बड़ी पीड़ा होती होगी तुझे! परन्तु शांत हो जा। हम जो भी हैं, जैसे भी हैं अपने ही कारण हैं। अपना ख्याल करो चील! अपने आपको सम्हालो।

चील को मुनि के दर्शन से शांति और अमृतवाणी से शांति का अनुभव हुआ। मुनियों ने कहा, भोली चील! बड़ी तकलीफ में पड़ी दीखती है। पीड़ा और जन्म जन्मातरों के दुःख की परम्परा को उत्पन्न करने वाले क्रोध और मोह को छोड़ दे। क्रोध और मोह ही समस्त दुखों का मूल कारण है। तू उसे छोड़ और हमारे परम हितकारी वचनों को शांति से सुन।

भली चील! तृष्णा, आशा और ममता छोड़ ये तेरी शांति का सर्वनाश कर देंगे। तेरी तकलीफ और बढ़ा देंगे। तू करीब अब वहाँ पहुँच चुकी है जहाँ कोई बचा नहीं सकता। जीव जीने की प्रबल इच्छावश मरने से आनाकानी करता है तो लगता है कि हमारे साथ जबरदस्ती की जा रही है। बहुत छटपटता है पर बच तो नहीं सकता। अपने लिए तू ऐसा जोखिम पैदा ही मत करना। मौत तेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती यदि तु अपने को सम्हाल ले। विश्वास कर तुझे कुछ भी खोना नहीं है। जो तेरा है वह और कहीं नहीं है, तेरे पास ही है।

तू किसी को दोष मत दे। कोस नहीं। किसी पर अनुराग भी मत कर। तुझे जाना है। चलते मुसाफिर को अलग-बगल की दुनिया से वास्ता ही क्या? अपने आगे का रास्ता देख। देख चील, हम तुझे बड़े काम की बात कह रहे हैं, सुन।

चील अब दुःख दर्द वियोग सब भूलती जा रही है। उसने दयामय वात्सल्यमय मुनि युगल की बातों पर अपने मन को केन्द्रित किया है। वह कुछ समझ रही है, ध्वनि से चेष्टा से निर्भय हो वह पड़ी रही। मुनि बोलते रहे;

सारे संसार में श्रेष्ठ और उत्तम मंगल स्वरूप दया के महासागर श्री अरिहंत प्रभु का तुझे शरण हो। कर्मकलंक से सर्वथा मुक्त श्री सिद्ध भगवान् का तुझे शरण हो। पंचमहाव्रतधारी सुसाधुभगवंतो का तुझे शरण हो। तीर्थंकर परमात्मा द्वारा उपदिष्ट अहिंसामय उत्तम धर्म का तुझे शरण हो। चील! ये संसार में सर्वश्रेष्ठ चार शरण हैं जो तुझे मिल गया। ये शरण जिसे मिल जाते हैं उसे कोई चिंता नहीं रहती है, ये ही जीव का एक मात्र आधार है और वह तेरे पास हैं। अब तू निराधार नहीं है। अब तेरा कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। तू अरिहंत प्रभु को नमस्कार कर, तेरे सभी दुःखों का शीघ्र ही अन्त आ जायेगा। सुदृढ़ संकल्प से बोल नमो अरिहंताणं। नमो सिद्धाणं। नमो आयारियाणं। नमो उवज्झायाणं। नमो लोएसव्वाहूणं। एसो पंच नमुक्कारो। सव्वपावप्पणासणो। मंगला णं च सव्वेसिं। पढ़मं हवई मंगलं। यह मंगलमय महामंत्र है, इसमें तुम अपने तन-मन बुद्धि और प्राण को केन्द्रित कर। यह मंत्र शीघ्र ही सर्व पापों का नाश करता है और सारे दुःखों का कारण ही पाप है। अतः यह महामंत्र तेरे सभी दुःखों का नाश करेगा इसमें कोई शक नहीं, तु विश्वास रखना।

चील! याद रखना, सारे अनर्थों का कारण ममत्व है। अपनी मानी चीज को हानि पहुँचते ही क्रोध-विद्वेष, धिक्कार और हिंसा की भावना पैदा होती है। उससे दुःख और क्लेश होते और बढ़ते रहते हैं। हकीकत में कौन तेरा है? क्या तेरा है? जो भी मेरा मालूम होता है वह कचरे का ढेर है, मलवा है, यहाँ तेरा तो कुछ नहीं है किन्तु तूँ स्वयं हैं–जो बहुत बड़ी और बुनियादी बात है। चील! अपने को सम्हाल।

तूने खूब खाया, बहुत पीया, बेहिसाब भुगता और काफी कुछ जी लिया। अब तू शांत और तृप्त हो जा। सारे संसार से अपने मन को हटा ले। संतुष्ट हो जा। नियम ले ले। तुझे क्या चाहिए। अरिहंत वीतराग परमात्मा को याद कर। बोल, नमो अरिहंताणं।

क्रमशः

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

English :

No.	Title		Price
1.	Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:		
	Vol - 1 (satakas 1- 2)	Price : Rs.	150.00
	Vol - 2 (satakas 3- 6)		150.00
	Vol - 3 (satakas 7- 8)		150.00
	Vol - 4 (satakas 9- 11)		150.00
2.	James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)	Price : Rs.	100.00
3.	P. C. Samsukha - Essence of Jainism translated by Ganesh Lalwani.	Price : Rs.	15.00
4.	Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord,	Price : Rs.	15.00
5.	Verses from Cidananda Translated by Ganesh Lalwani	Price : Rs.	15.00
6.	Ganesh Lalwani - Jainthology	Price : Rs.	100.00
7.	Lalwani and S. R. Banerjee- Weber's Sacred Literature of the Jains	Price : Rs.	100.00
8.	Prof. S. R. Banerjee Jainism in Different States of India	Price : Rs.	100.00
9.	Prof. S. R. Banerjee Introducing Jainism	Price : Rs.	
10.	Smt. Lata Bothra- The Harmony Within	Price : Rs.	100.00
11.	Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira	Price : Rs.	100.00

Hindi :

No.	Title		Price
1.	Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) Translated by Shrimati Rajkumari Begani	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani	Price : Rs.	20.00
3.	Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani	Price : Rs.	30.00
4.	Ganesh Lalwani - Chandan-Murti Translated by Shrimati Rajkumari Begani	Price : Rs.	50.00

5.	Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira	Price : Rs.	60.00
6.	Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat,	Price : Rs.	45.00
7.	Ganesh Lalwani -- Panchdasi.	Price : Rs.	100.00
8.	Rajkumari Begani-Yado ke Aine me.	Price : Rs.	30.00
9.	Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra	Price : Rs.	15.00
10.	Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm	Price : Rs.	24.00
11.	Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika	Price : Rs.	20.00
12.	Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad	Price : Rs.	250.00

Bengali :

1.	Ganesh Lalwani-Atimukta,	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani-Sraman Sanskriti ki Kavita	Price : Rs.	20.00
3.	Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma.	Price : Rs.	15.00
4.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma	Price : Rs.	20.00
5.	Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra	Price : Rs.	25.00
6.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita	Price : Rs.	20.00
7.	Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti	Price : Rs.	20.00

Some Other Publications :

1.	Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir	Price : Rs.	15.00
2.	Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan	Price : Rs.	10.00
3.	Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma	Price : Rs.	100.00
4.	Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali)	Price : Rs.	
5.	Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali)	Price : Rs.	50.00
6.	K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira	Price : Rs.	25.00

NAHAR
5/1 Acharya Jagadish Chandra Bose Road,
Kolkata - 700 020
Phone: 2283 3515, Resi: 2246 7757

BOYD SMITHS PVT. LTD.
8, Netaji Subhas Road
B-3/5 Gillander House, Kolkata - 700 001
Ph: (O) 2230-8105/2139,

KUMAR CHANDRA SINGH DUDHORIA
Azimganj House
7, Camac Street, Kolkata - 700 017
Ph: 2282-5234/0329

M/S. METROPOLITAN BOOK COMPANY
93, Park Street, Kolkata - 700 016
Ph: 2226-2418, (Resi) 2454-5650

SURANA MOTORS PVT. LTD.
84 Parijat, 8th Floor, 24A, Shakespeare Sarani
Kolkata - 700 071, Ph: 2247-7450, 2283-4662

SUDIP KUMAR SINGH DUDHORIA
Indian Silk House Agencies
129, Rasbehari Avenue, Kolkata- 700 029,
Ph: (S) 2464-1186, (R) 2475-3133

ASHOK KUMAR RAIDANI
M/s. Ashok Trading Corporation
Dealing in All types of Blanket and General Order Supplier
6, Temple Street, Kolkata - 700 072
Ph: 2237-4132, 2236-2072

IN THE MEMORY OF SOHANRAJ SINGHVI
VINAYMATI SINGHVI
93/4 Karaya Road, Kolkata - 700 019
Ph: (O) 2230 8967, (Resi) 2247 1750

GLOBE TRAVELS
Contact for better & Friendlier Service
11, Ho Chi Minh Sarani, Kolkata - 700 071
Ph: (O) 2282-8181-4/8780 (R) 2249-1243

SUVGYA BOYED
340, Mill Road, Apt. # 1407
Etobicolse, onterio m9 Cly8
416-622-5583

DR. K.B. SINGH (M.B.B.S.)
67, S.N. Pandit Road, Kolkata - 700 025
Ph: 2455-2081, 2454-7127, Chember- 2268-8670/4207

LALCHAND DHARAMCHAND
Govt. Recognised Export House
12, India Exchange Place, Kolkata-700 001
Ph: (B) 2230-2074/8958 (D) 2230-3187
Cable: SWADHARMI, Fax: (033) 2220 9755
Resi: 2464-3235/1541, Fax: (033) 2464 0547

TARUN TEXTILES (P) LTD.
203/1, Mahatma Gandhi Road, Kolkata - 700 007
Ph: 2268-8677, 2269-6097

AJAY DAGA, AJAY TRADERS
28, B.T. Road, Kolkata - 700 002
Ph: (O) 2257-1697/7059 (Fact). 2557-1697/7059

COMPUTER EXCHANGE
Park Centre' 24 Park Street
Kolkata - 700 016, Ph: 2229-5047

SUNDERLAL DUGAR
R. D. B. Industries Ltd.
Regd. Off: Bikaner Building
8/1 Lal Bazar Street, Kolkata - 700 001
Ph: 2248-5146/6941/3350, Mobile: 9830032021

ARBEITS INDIA
8/1, Middleton Road, 8th Floor, Room No.4
Kolkata - 700 071, Ph: 2229 6256/8730/1029
Resi: 2287-6516
Telex: 2021 2333, ARBI IN, Fax : 2226 0174

PSCO

MECHANICAL ENGINEERS & FABRICATORS.
Howrah Amta Road, Balitikuri Howrah

M/S. POLY UDYOG
Unipack Industries
Manufacturers & Printers of HM; HDPE,
LD, LLDPE, BOPP PRINTED BAGS.
31-B, Jhowtalla Road
Kolkata - 700 017, Phone: 2287-9277, 2287-2826
Tele Fax: 22402825

SAROJ DUGAR
Fancy saree, bed covers
34/1J. Ballygunge Circular Road
Kolkata - 700 019, Phone: 2475 1458

VEEKEY ELECTRONICS
M/s. Madhur Electronics, 29/1B, Chandni Chowk
3rd floor, Kolkata - 700 013
Ph: 2237-6255

KRISHNA JUTE COMPANY
Jute Broker & Dealer
9, India Exchange Place, Kolkata - 700 001
Phone : 2230-0871/9372, 3022937172
(M) 9330926774

ELECTO PLASTIC PRODUCTS PVT. LTD.
22 Rabindra Sarani, Kolkata - 700 073
Phone : 2236-3028, 2237-4039

BHEEKAM CHAND DEEP CHAND BHURA
M/s. D. C. Group Pvt. Ltd, Sagar Estate, 5th Floor
2, Clive Ghat Street, Kolkata - 700 001
Phone : 2220-5229/5121

MOUJIRAM PANNALAL
Citizen Umbrella
45, Armenian Street, Kolkata - 700 001
Ph : (Shop) 3288-8088/2248-8086,
(O) 2268-1396/30924653, Fax : 2271-2151,

ROYAL TOUCH OVERSEAS CORPORATION
47, Pandit Purushottam Roy Street, 2nd Floor,
Kolkata - 700 007, Phone : (033)2270-1329, 2272-1033,
Fax : 91-33-22702413

NAKODA METAL
Deals in all kinds of Aluminium
32A Brabourne Road, Kolkata - 700 001
Ph: 2235-2076, 2235-5701

MUSICAL FILMS (P) LTD
9A, Esplanade East, Kolkata - 700 069

SAGAR MAL SURESH KUMAR
187, Rabindra Sarani, Kolkata - 700 007
Ph: Gaddy- 2273-1766, 2268-8846
Mobile: 9331019835, Resi : 2355-9641/7196

B.W.M.INTERNATIONAL & BIKANER WOOLLEN MILLS
4, Srinath Katara, Main Road,
Bhadohi, Pin : 221 401 (U.P.)
Ph: (05414) 225178, 225778, Fax : (05414) 225378 (Bhdohi)
Phone : (0151) 2522404, 2225400, Fax : (0151) 2202256 (Bikaner)

DR. NARENDRA L. PARSON & RITA PARSON
18531 Valley Drive
Villa Park, California 92667 U.S.A.
Phone : 714-998-1447714998-2726,
Fax : 7147717607

V.S. JAIN
Royal Gems INC.
632 Vine Street, Suit# 421
Cincinnati OH 45202
Phone : 1-800-627-6339

RANJIT SINGHI
Singhi Exports (P) Ltd.
P15 New C.I.T. Road
Kolkata - 700 073

RAJIB DOOGAR
305, East Tomaras Avenue
Savoy, IL 61874-9495
USA
Ph : 001-217-355-0174/0187, e-mail : doogar@uiuc.edu

SMT. KUSUM KUMARI DOOGAR
C/o Shri P.K. Doogar,
Amil Khata, P.O. Jiaganj, Dist: Murshidabad, Pin- 742123
West Bengal, Phone: 03483-56896

M/S. SETHIA OIL INDUSTRIES LTD.
Manufactureres of De oiled cakes & Refined oil.
Lucknow Road, PO. Sitapur - 261001 (U.P.)
Phone: 05862/42017/42073

M/S. BEEKAY VANIJYA PVT. LTD.
City Centre, 19, Synagogue Street
5th Floor, Room No. 534-535, Kolkata - 700 001
Phone: 2210-3239, 2210-3253
Fax: 033-2210-3253 (M) 9831001739
e-mail : bktarfab@satyam.net.in

जो हिंसात्मक प्रवृत्ति से विलग है,
वही बुद्ध, ज्ञानी हैं

WITH BEST WISHES

DEEPAK KUMAR SANDEEP KUMAR NAHATA
Dealers in Diamond
Manufactures of Precious & Semi Precious Ornaments
63A, Burtolla Street, Kolkata - 700 007,
Phone: (G) 2268-0900 (M) 9830094325

DHANDHIA BROS
6/1 Hara Prasad Dey lane,
Kolkata - 700 007
Phone: (R) 2274-6241/3474 (O) 2269-0581

In the Sweet Memory of my mother
LATE SOVABOTI DUSAJ
Shri Manilal Dusaj
6A, Rabindra Sarani, Kolkata - 700 001
Phone : 2237-5869, Mobil : 98301017091, 9830142191

With Best Compliment from :-
SURANA WOOLEN PVT. LTD.
MANUFACTURERS * IMPORTERS * EXPORTERS
67-A, Industrial Area, Rani Bazar,
Bikaner - 334 001 (India)
Phone : 22549302, 22544163 Mills
22201962, 22545065 Resi
Fax : 0151 - 22201960
E-mail : suranawl@datainfosys.net

In the memory of Badindrapat Singhji Dugar
GAUTAM DUGAR
34/1/K, Ballygunge Circular Road
Kalkata - 700 019
Phone: (O) 2475-1109/6835
(M) 31022126

ARIHANT JEWELLERS
Shri Mahendra Singh Nahata
M/s. B.B. Enterprises
24 Ray Street, 2nd Floor, Kolkata - 700 00
Phone : 3258-2284/9831030188

M/s. MUKUND JEWELLERS
manufactures of American Diamond
Jewellery, Gold & Silver Goods &
Dealers in imitation Jewellery
P-37A, Kalakar Street,
Kolkata - 700 007, Ph: 2272-3876

KAMAL SINGH KARNAWAT
7,Khelat Ghosh Lane, Kolkata - 700 006
Dealers in Diamonds Precious Stones
Ph: (R) 2259-3885, (M) 03332391278

RATAN LAL DUNGARIA
16B, Ashutosh Mukherjee Road
Kolkata - 700 020, Ph: (Resi) 2455-3586

M/S. PARSON BROTHERS
18B, Sukeas Lane, Kolkata - 700 001
Phone: 2242-3870

KESARIA & CO.
Jute Tea Blenders & Packeteers Since 1921
2, Lal Bazar Street, Todi Chambers, 5th Floor
Kolkata - 700 001
Ph: (O) 2248-8576/0669/1242
(Resi) 2225-5514, 2237-8208, 2229-1783

With Best Wishes
INDUSTRIAL PUMPS & MOTOR AGENCIES
40, Strand Road, 4th Floor, R.N.3, Kolkata - 700 001

M.L. CHOPRA & CO.
Freight & Chartering Brokers
12-B, N. S. Road; Kolkata - 1
PH : 2230 5059 / 2230 1130, EMAIL : freya@cal.vsnl.co.in

With Best Compliments From-
STEELUX INDIA; CIVIL CONTACTORS
13/5 Hazi Jakaria Lane, Kolkata - 700 006

SHIV KUMAR JAIN
"Mineral House"
27A, Camac Street, Kolkata - 700 016
Ph: (Off) 2287-7880, 2287-8663, Res) 2287-8128, 2287-9546

MAHENDRA TATER
Block No. 2, 3rd Floor,
45/4A, Chakraberia Road (S)
Kolkata - 700 025

M/S. SARAT CHATTERJEE& CO. (VSP) PVT. LTD.
Regd Office 2, Clive Ghat Street, (N. C. Dutta Sarani)
2nd Floor, Room No. 10, Kolkata - 700 001
Ph: 2230-7162, 2231-5540, Fax : (91)(33)2220 6400
e-mail: sccbss@cal2.vsnl.net.in

APARAJITA BOYED
M/s. Suravee Business Services Pvt. Ltd.
9/10, Sitanath Bose Lane,
Salkia, Howrah - 711 106, Ph: 2665-3666/2272
e-mail: Suravee@cal2.vsnl.net.in / sona@cal3.vsnl.net.in

SHRI JAIN SWETAMBER SEVA SAMITI
13, Narayan Prasad Babu Lane
Kolkata - 700 007, Ph: 2269-1408

BADALIA GEMS PVT. LTD.
BADALIA HOUSE
66/3, Beadon Street, Kolkata - 700 006
Phone : (O) 2554-8999/8997 (R) 2533-9985
Fax : 033 5548999, e-mail : shashibadlia@usa.net

CREATIVE
12, Dargah Road, Post Box 16127, Kolkata - 700 017
Ph: 2240 3758 / 2287-3450/3758, 2281-1690, 2290-0514/3450
Fax : (033) 2240 0098, 2247 1833

JAIPUR EMPORIUM JEWELLERS
Anandlok
227 A. J. C. Bose Road, Kolkata - 700 020
Ph: 2280-0494, 2287-2650, Resi : 2358-0602, (M) 31074937

WITH BEST WISHES
जो एक को जानता है, वह सबको जानता है और
जो सबको जानता है वह एक को जानता है।

CALTRONIX
12 India Exchange Place, 3rd Floor, Kolkata - 700 001
Phone: 2230 1958/4110

PABITRA KUMAR DOOGAR
Amil Khata, P.O. Jiaganj, Dist: Murshidabad, Pin- 742123
West Bengal, Phone: 03483-256896

SHRI VIJAY NAHATA
58, Walver Hallow Road
Upper Brook VileNew York - 11545
E-mail : nahata@aol.com

In the sweet memory of our mother
Late Karuna Kumari Kuthari
Jyoti Kumar Kuthari
12, India Exchange Place, Kolkata - 700 001
Phone : 2230 3142 (O) 2475 0995,
Ranjan Kumar Kuthari
1A, Vidya Sagar Street, Kolkata - 700 009
Phone : 2350 2173, 2351 6969

With Best Compliments from :-
22, Strand Road
2nd Floor
Kolkata - 700 001
Phone : 22131484, Fax : 22131488

BIKASH CHHAJER
Director
SITAL GROUP OF COMPANIES
'Centre Point', 21, Hemanta Basu Sarani
2nd Floor, Room No. 226, Kolkata - 700 001
Phone : 2242-9265, 2210-9228, Fax : (033) 2242-9265
Mobile : 98310 22577, E-mail : finncon@vsnl.net

In the memory of my father
Late Nawaratan mull Singhvi
N. M. SINGHVI
3E, UPASANA, 48, Kali Temple Road
Kolkata - 700 026, Phone : 2466 8186 (R)

In the sweet memory of our Father
Late Devi Singhji Kochar
Shashipal Kochar
Katra Ahluwala
Amritsar - 143 006

ऐसा विश्वास दिल में जमाते चलो
सिद्ध, अरिहन्त को मन में रमाते चलो,
वक्त आयेगा ऐसा कभी न कभी
सिद्धि पायेंगे हम भी कभी न कभी।

KUSUM CHANACHUR

Founder : Late. Sikhar Chand Churoria

Kusum
QUALITY PRODUCT

Our Quality Product of :

Anusandhan
Kolkata Nasta
Badsha Khan
Picnic
Raja
Shubham
Bhaonagari Ghantia
Jocker
Lajawab
Papri Ghantia
Rim Jhim
Tinku

MANUFACTURED BY

M/s. K. K. Food Product
Prop. Anil Kumar, Sunil Kumar Churoria
P. O. Azimganj, Dist: Murshidabad
Pin No.- 742122, West Bengal
Phone No.: 03483-253232,
Fax No.: 03483-253566

KOLKATA ADDRESS:

36, Maharshi Debendra Road, 3rd Floor Room No.- 308
Kolkata - 700 006, Phone No.: 2259-6990, 3293-2081
Fax No.: 033-2259-6989, (M) 9830423668

शस्त्र हिंसा एक से एक बढ़कर है।
किन्तु अशस्त्र अहिंसा से बढ़कर कोई शस्त्र नहीं।
अर्थात् अहिंसा से बढ़कर कोई साधना नहीं है।

THE GANGES MANUFACTURING COMPANY LIMITED

Chatterjee International Centre
33A, Jawaharlal Nehru Road,
6th Floor, Flat No. A-1
Kolkata - 700 071

Phone:
2226-0881
2226-0883
2226-6283
2226-6953

Gram "GANGJUTMIL"
Fax: + 91-33-245-7591
Telex: 021-2101 GANG IN

Mill

BANSBERIA

Dist: HOOGHLY
Pin-712 502
Phone: 2634-6441/2644-6442
Fax: 2634 6287

जैन मत तब से प्रचलित है
जबसे संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ।
मुझे इसमें किसी भी प्रकार की आपत्ति नहीं है
कि जैन धर्म वैदान्तिक दर्शनों से पूर्व का हैं।

Dr. Satish Chandra
Principal Sanskrit College, Kolkata

Estd. Quality Since 1940

BHANSALI

Quality. Innovation. Reliability

BHANSALI UDYOG PVT. LTD.

(Formerly: Laxman Singh Jariwala)

Balwant Jain - Chairman

A - 42, Mayapuri, Phase - 1, New Delhi - 110 064
Phone: 28114496, 28115086, 28115203
Fax: 28116184
e-mail: bhansali@mantraonline.com

शुभ कामनाओं सहित —

मनुष्य जीवन में ही सत्य कार्य करने का अवसर उपलब्ध होता है।

अहिंसा अमृत है, हिंसा विष है।

अनाम

PICK UP ALL U WANT UNDER ONE ROOF

▶▶Groceries ▶▶ Edible Oils ▶▶ Personal Care ▶▶ Imported Pastas, Chocolates, Sauces, Gift Items, etc. ▶▶Hygiene ▶▶Baby Care ▶▶Stationery ▶▶other Household Items

Stop 2 Shop

AT YOUR COMPLETE SUPERMARKET

NAHAR PARK
45/4A, Chakraberia Road (S), Kolkata - 700025
(Near Jadu Babu's Bazar)
Phone: 24544696

Store Timings : 7.00 am to 9pm
All days open except Thursday

FREE HOME DELIVERY

All Prices BELOW M.R.P.

PARKING AVAILABLE

28 water supply schemes
315,000 metres of pipelines
110,000 kilowatts of pumping stations
180,000 million litres of treated water
13,000 kilowatts of hydel power plants

(And in place where Columbı eared to tread)

SPML

Engineering Life

SUBHASH PROJECTS & MARKETING LIMITED

113 Park street. Kolkata 700 016

Tel : 2229 8228. Fax : 2229 3882. 2245 7562

e-mail : info@subhash.com. website: www.subhash.com

Head Office: 113 Park Street, 3rd floor, South Block. Kolkata-700016 Ph:(033)2229-8228.
Registered Office: Subhash House, F-27/2 Okhla Industrial area. Phase II New Delhi-110 020
Ph: (011) 692 7091-94. Fax (011) 684 6003. Regional Office: 8/2 Ulsoor Road.
Bangalore 560-042 Ph: (080) 559 5508-15. Fax: (080) 559-5580.

Laying pipelines across one of the nation's driest region, braving temparature of 50° C.

Executing the entire water intake and water carrier system including treatment and allied civil works for the mammoth Bakreswar Thermal Power Project.

Bulling the water supply, fire fighting and effluent disposal system with deep pump houses in the waterlogged seashore of Paradip.

Creating the highest head-water supply scheme in a single pumping station in the world at Lunglei in Mizoram-at 880 metres, no less.

Building a floating pumping station on the fierce Brahmaputra.

Ascending 11,000 feet in snow laden Arunachal Pradesh to create an all powerful hydro-electric plant.

Delivering the impossible, on time and perfectly is the hallmark of Subhash Projects and Marketing Limited. Add to that our credo of when you dare, then alone you do. Resulting in a string of acheivements. Under the most arduous of conditions. Fulfilling the most unlikely of dreams.

Using the most advanced technology and equipment, we are known for our innovative solution. Coupled with the financial strength to back our guarantees.

Be it engineering design. Construction work or construction management. Be it environmental, infrastructural, civil and power projects. The truth is we design, build, operate and maintain with equal skill. Moreover, we follow the foolproof Engineering, Procurement and Construction System. Simply put, we are a single point responsibility. A one stop shop.

So, next time, somebody suggests that deserts by definition connote dryness, you recommend he visit us for a lesson in reality.

With Best Compliments

BC JAIN JEWELLERS
Since 1926

B.C. JAIN JEWELLERS PVT. LTD.

22, Camac Street
3rd floor, Block-A
Kolkata - 700 007
Phone: 2283 6203 / 6204 / 0056
Fax : 2283 6643
Resi : 2358 6901, 2359 5054

TITTHAYARA
Vol XXX. No. 4
25th July 2006

Registered
No. SSRM/KOL./RMS/WB/ RNP - 070/2004-06
R.N.I. 30181/77

ज्ञानी वही है जो किसी भी प्राणी की हिंसा न करें। सभी जीव जीना चाहते है मरना कोई नहीं चाहता अतः संसार के त्रस और स्थावर सभी प्राणियों को जाने या अनजाने में न मारना चाहिये, न दूसरों से मरवाना चाहिये, ना ही मन वचन काया से किसी को पीड़ा पहुँचाना चाहिये।

Kamal Singh Rampuria
Rampuria Mansions

17/3, Mukhram Kanoria Road, Howrah
Phone No. : 2666-7212/7225